भाग 2

उम्मीद और पहल की कहानियां

सिविक आख्यान

विकास संवाद

सिविक आख्यान

किताब का नाम	:	**उम्मीद और पहल की कहानियां (भाग-1)**
लेखक	:	**सिविक आख्यान के सभी साथी**
संपादन	:	**राकेश कुमार मालवीय और रामकुमार विद्यार्थी**
सहयोग	:	**कार्तिक शर्मा, निधि तिवारी, नितेश तिवारी**
मार्गदर्शन	:	**सचिन कुमार जैन**
डिजाइन	:	अफ़ज़ाल अली, 8889766693
वर्ष	:	2026
प्रतियां	:	500
प्रकाशक	:	सेंटर फॉर स्ट्रेटजिक कम्युनिकेशन, विकास संवाद
पता	:	ए- 5, आयकर कॉलोनी, भोपाल
संपर्क	:	0755- 4252789
ईमेल	:	office@vssmp.org
मुद्रक	:	अमित प्रकाशन, भोपाल

*इस पुस्तिका की कहानियां विकास संवाद द्वारा आयोजित सिविक आख्यान कार्यशाला के दौरान तैयार की गई है। इन्हें बिना ज्यादा संपादन के ज्यों का त्यों प्रकाशित किया जा रहा है।

सिविक आख्यान का परिचय

सामाजिक/नागरिक संस्थाएं समाज में मानवीय और संवैधानिक मूल्यों की स्थापना के लिए सक्रिय कार्यक्रम संचालित कर रही हैं। इसके साथ ही उन्होंने भारत की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक चुनौतियों से निपटने के लिए कई रास्ते और समाधान प्रस्तुत किए हैं। इसके बावजूद भारत के सामाजिक मंचों पर सामाजिक/नागरिक संस्थाओं का नकारात्मक चित्र ही उभर कर आता है। उन्हें समस्याओं के समाधान की दिशा में गैर-जरूरी इकाई के रूप में प्रस्तुत करने के प्रयास किए गए हैं।

दूसरी तरफ हम यह भी देखते हैं कि सामाजिक/नागरिक संस्थाएं अपने हितग्राही समूहों से आगे बढ़कर व्यापक समाज से संवाद करने के लिए आगे नहीं बढ़ीं। इसका परिणाम यह हुआ कि उनके काम, उनके उद्देश्यों, उनके मकसद के बारे में यदि किसी को जानकारी हो पाती है, तो वह है उनका प्रत्यक्ष हितग्राही समूह। इससे आगे बढ़कर उन्हीं गांवों, उन्हीं विकासखंडों या जिलों में संस्थाओं ने व्यापक समाज, स्थानीय जन प्रतिनिधियों, संवादकर्मियों, स्थानीय प्रशासन के प्रतिनिधियों, युवाओं, छात्रों के साथ सामाजिक-आर्थिक मुद्दों, उनसे जुड़ी समस्याओं, उन समस्याओं के समाधानों, उन समाधानों में समाज के इन वर्गों यानी समुदाय, छात्रों, युवाओं, जनप्रतिनिधियों की भूमिका, और एक सामाजिक/नागरिक संस्था के रूप में उनके द्वारा किये जा रहे प्रयासों पर संवाद नहीं किया और अपने काम के साथ नहीं जोड़ा।

इससे समाज और संस्थाओं के बीच में दूरी बहुत बढ़ गयी। जब संस्थाओं ने समुदाय और उसके मत निर्माताओं से पहचान नहीं बनाई, रिश्ता और संवाद नहीं बनाया, तो इससे उनके बारे में नकारात्मक धारणाओं को स्थापित किया गया। इसे स्पष्ट करने के लिए सबसे जरूरी है सामाजिक/नागरिक संस्थाओं का रणनीतिक संचार की प्रक्रिया को अपनाना। समाज में सामाजिक/नागरिक संस्थाओं की रचनात्मक पहचान बनाने के लिए ये एक अनिवार्यता है कि ये संस्थाएं केवल अपने कार्यक्रम की हितग्राही या लक्षित समूह-केन्द्रित गतिविधियों तक ही सीमित न रहें, बल्कि व्यापक समाज और अन्य समूहों से निरंतर और स्व-प्रेरित संवाद की रणनीति को अपनाएं ।

इस पृष्ठभूमि में पिछले पांच साल से एक पहल कर रहे हैं, जिसका मकसद है सामाजिक-नागरिक संस्थाओं द्वारा विभिन्न विषयों पर किए जा रहे हस्तक्षेपों और कार्यक्रमों को परिणामदायक बनाने के लिए उनकी रणनीतिक संचार की क्षमता वृद्धि करना और उनकी कार्ययोजना में संचार के पहलू को अनिवार्य और मज़बूत बनाना। इस कार्यक्रम में अब तक पचास से ज्यादा प्रशिक्षण शिविरों के माध्यम से 300 संस्थाओं के 800 से ज्यादा साथियों के साथ स्टोरी टेलिंग की विविध विधाओं में काम किया गया है।

इन्हीं संस्थाओं में से पचास संस्थाओं के साथ हम एक और गहन प्रक्रिया में गए, जिसका नाम है सिविक आख्यान। दो कोहार्ट में इन संस्थाओं ने दो कार्यशालाओं और निरंतर संवाद की एक गहन प्रक्रिया के माध्यम से आख्यान शब्द को और बेहतरी से और व्यावहारिक रूप से समझा। एक साझी प्रक्रिया के माध्यम से स्टोरी टेलिंग के कई आयामों पर साझी समझ और रणनीति बनाने पर काम किया। इस प्रक्रिया से बहुत सारी सीख और समझ तो निकली ही जो उनके हर रोज के काम पर नजर आती है, लेकिन कुछ स्टोरीज और पॉडकास्ट पर भी काम हुआ। दोनों कोहार्ट की स्टोरीज को हम इस संकलन के दो भागों में लेकर आए हैं। आशा और उम्मीद है कि यह आपको उपयोगी लगेंगी।

सादर

– टीम विकास संवाद

सिविक आख्यान भाग - 2

अनुक्रम

07 जैविक खेती की ओर दूद्रू के किसान
– जगबीर सिंह, सामाजिक प्रेरणा एवं ग्रामीण विकास संस्थान, जयपुर, राजस्थान

11 बाल विवाह पर बदलने लगी गांव की सोच
– सचिन कुमार, आशा किरण सेवा संस्थान, झारखंड

15 बेटियों के सिसकते सपने
– खुशबू राय, देवघर झारखंड

19 एक अबोलता का न्याय के लिए संघर्ष
– लतिका सिंह, श्री जन संस्था महासमुंद, छतीसगढ़

23 सामूहिक जतन से मॉडल बनी आंगनवाड़ियां
– ऊषा चौधरी, जतन संस्था, राजसमंद, राजस्थान

27 पढ़ाई का सपना पूरा करने सास ने दी हिम्मत
– राघवेंद्र सेवड़ा, एजुकेट गर्ल, जयपुर, राजस्थान

31 श्रमदान कर बनाया अतिरिक्त कक्ष
– विष्णु प्रिया ठाकुर, श्री जन कल्याण संस्था, महासमुंद, छत्तीसगढ़

35 जब ग्राम सभा में पहुंचने लगी महिलाएं
– शंकर लाल राणा, नई दिशा, हजारीबाग, झारखंड

39 प्राकृतिक खेती की राह पर बढ़ते किसान
– पवन खीचड़, बजाज फाउंडेशन , सीकर, राजस्थान

43 लैंगिक समानता की मिसाल बनी अनीता
– डॉ. राजेश मालाकार, विकासोन्मुख संस्था, जयपुर, राजस्थान

47 कंचन की हरी उम्मीद
– डॉ. नरेंद्र कुमार गर्वा, अलखा फाउंडेशन, किशनगढ़ रेनवाल जिला-जयपुर, राजस्थान

51 रवि के चेहरे पर आत्मविश्वास की चमक
– विजय कुमार महतो, आशा किरण सेवा संस्थान, बोकारो, झारखंड

55 भूरा की मेहनत रंग लाई
– दिनेश पुरी, ग्रामीण विकास शोध एवं तकनीकी केंद्र, टोंक, राजस्थान

59 लड़कियों की अनुपम पहचान
– मीनाक्षी पाल, सीएसईआई, नई दिल्ली

63 लडवारी की महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण
– शबनम, मंजरी फाउंडेशन, धौलपुर, राजस्थान

67 मनभरी से 'धनभरी' बनने की कहानी
– नरेंद्र चौधरी, (इब्तिदा), अलवर, राजस्थान

73 आदिवासी बाल स्वराज-सच्चे बचपन की बुनियाद
– मधु सिंह, वाग्धारा, जयपुर, राजस्थान

79 नीर और नारी: कैलाशी बनी मिसाल
– हेमराज डीडवानिया, ग्राम विकास नवयुवक मण्डल लापोड़िया, राजस्थान

83 हाय रे पानी रे पानी
– रवि घोष, बजाज फाउण्डेशन , सीकर, राजस्थान

87 विरासत बन रही आजीविका की नई राह
– चंद्रकांत यादव, ग्रामोदय ग्राम विकास समिति, कबीरधाम, छ.ग.

91 बेटी वो दिन न देखे, जो मैंने देखे
– खेमचंद जौनवाल, इब्तिदा संस्था, अलवर, राजस्थान

95 दादी सा के आशीर्वाद से जब उन्हें मिलनी लगी पेंशन
– आंचल शुक्ला, सामाजिक कार्यकर्ता, नई दिल्ली

99 अपने सपने पूरे कर सकता हूं
दीपक कुमार, ड्रीम्स संस्था, किशनगढ़, अजमेर

103 बंजर ज़मीन पर हरियाली की 'शोभा'
ज्योति पगार, प्रभात विकास मंच, धुले (महाराष्ट्र)

107 सूदखोरी का जाल तोड़ती 'धोड़ी बैंक'
दीपक पाटीदार, महिला शक्ति संघ, झाबुआ

111 राजेश की पानीदार पहल
धीरज वानखेड़े, बजाज फाउण्डेशन, राजस्थान

115 उजाले की शाला
तनिष्क पंवार, संपर्क संस्था, पेटलावद, झाबुआ (म.प्र.)

119 ऐसे रुकने लगा पलायन
कमलेश, संपर्क संस्था, पेटलावद, झाबुआ (म.प्र.)

123 सुरक्षित स्कूल-सुरक्षित जीवन का संकल्प
मनोज चौरसिया, आरएडबल्यूएस, कोटा, राजस्थान

127 प्राकृतिक खेती की राह पर 'हंसराज'
दीपक जांगिड, बजाज फाउंडेशन, सीकर(राजस्थान)

SPGVS:
प्राकृतिक खेती
प्रशिक्षण - दूदू
जीवामृत
केंचुआ खाद
केंचुआ खाद
जीवामृत
गाय का गोबर

जैविक खेती की ओर दूदू के किसान

दूदू की यह कहानी केवल खेती के बदलाव की नहीं, बल्कि एक पूरे समाज के बदलते जीवन की कहानी है। रासायनिक खेती के कारण बिगड़ती जमीन, पलायन करते युवा और बढ़ते अपराध के बीच एक नई राह की शुरुआत होती है। यह कहानी दिखाती है कि कैसे सही मार्गदर्शन और सामूहिक प्रयास से न केवल खेती, बल्कि युवाओं का भविष्य भी बदला जा सकता है।

जगबीर सिंह
सामाजिक प्रेरणा एवं ग्रामीण
विकास संस्थान (SPGVS)
जयपुर, राजस्थान

जयपुर जिले का दूदू ब्लॉक कभी अपनी उपजाऊ मिट्टी और लहलहाती फसलों के लिए जाना जाता था। लेकिन समय के साथ खेती का स्वरूप पूरी तरह बदल गया। किसानों ने पैदावार बढ़ाने के लिए अंधाधुंध रासायनिक खादों और जहरीले कीटनाशकों का इस्तेमाल शुरू कर दिया। शुरुआत में फसलें अच्छी हुईं, लेकिन कुछ ही सालों में इसके गंभीर परिणाम सामने आने लगे। मिट्टी की प्राकृतिक उर्वरता खत्म होने लगी और वह सख्त हो गई। खेती की लागत हर साल बढ़ती गई, जबकि मुनाफा लगातार गिरता गया। कर्ज के बोझ तले दबे किसानों के लिए खेती अब एक "घाटे का सौदा" बन चुकी थी। जब खेती में भविष्य अंधकारमय दिखने लगा, तो दूदू की नई पीढ़ी ने मिट्टी से मुंह मोड़ लिया। बेहतर जीवन की तलाश में यहां के युवा खेती छोड़कर आसपास के औद्योगिक क्षेत्रों के कारखानों में मजदूरी करने के लिए पलायन करने लगे, लेकिन इस चकाचौंध के पीछे की सच्चाई बहुत कड़वी थी।

कारखानों में 10–12 घंटे की हाड़-तोड़ मेहनत, कम वेतन और अमानवीय कार्य परिस्थितियों ने युवाओं को शारीरिक और मानसिक रूप से तोड़ दिया। इस हताशा, तनाव और अकेलेपन से बचने के लिए दूदू के कई युवा नशे की गिरफ्त में आ गए। शराब, गांजा और अन्य मादक पदार्थों की लत ने उनकी सोचने-समझने की शक्ति को कमजोर कर दिया। नशे की इस लत को पूरा करने के लिए जब कारखाने की मामूली पगार कम पड़ने लगी, तो युवाओं ने अपराध का रास्ता अपना लिया। चोरी, लूटपाट और आपसी झगड़ों के मामले तेजी से बढ़ने लगे। दूदू, जो कभी शांति और भाईचारे के लिए जाना जाता था, अब युवाओं की बर्बादी और बढ़ते अपराध के कारण आंसू बहा रहा था। परिवार टूट रहे थे और बुजुर्ग अपनी आंखों के सामने अपने जवान बेटों को बर्बाद होते देख बेबस थे।

इसी घोर निराशा के बीच सामाजिक प्रेरणा एवं ग्रामीण विकास

संस्थान (SPGVS) नामक एक गैर-सरकारी संगठन ने स्थिति को समझा और यह महसूस किया कि युवाओं को अपराध और नशे के दलदल से बाहर निकालने का एकमात्र तरीका उन्हें उनकी जड़ों, यानी खेती से दोबारा जोड़ना है, लेकिन इस बार एक नए और लाभकारी रूप में। संस्था ने सबसे पहले किसानों का विश्वास जीतने का प्रयास किया और उन्हें रासायनिक खेती के दुष्प्रभावों के बारे में विस्तार से समझाया। वर्ष 2021 से संस्था ने दूदू ब्लॉक के 1300 किसानों को एक साथ जोड़कर एक मजबूत नेटवर्क तैयार किया और उन्हें प्राकृतिक खेती का प्रशिक्षण देना शुरू किया। किसानों को यूरिया और डीएपी जैसी रासायनिक खादों

को छोड़कर जीवामृत, बीजामृत, केंचुआ खाद और गाय के गोबर का उपयोग करना सिखाया गया। बाजार से महंगे रसायन न खरीदने के कारण खेती की लागत लगभग शून्य हो गई। कुछ ही समय में मिट्टी की जलधारण क्षमता बढ़ने लगी और खेत फिर से उपजाऊ होने लगे। बिना जहर के उगाई गई फसलें न केवल किसानों के स्वास्थ्य के लिए बेहतर थीं, बल्कि बाजार में भी उनकी मांग बढ़ने लगी।

संस्था का सबसे महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी कदम युवाओं की मानसिकता में बदलाव लाना था। संस्था जानती थी कि युवा तभी वापस गांव लौटेंगे जब उन्हें खेती में मजदूर नहीं, बल्कि मालिक बनने का अवसर मिलेगा। इसी सोच के साथ संस्था ने कारखानों से लौटे और गांव में बेरोजगार बैठे युवाओं को कृषि उद्यमी बनने का प्रशिक्षण देना शुरू किया। युवाओं को यह सिखाया गया कि वे अपनी फसलों को सीधे मंडी में बिचौलियों को बेचने के बजाय उनका मूल्यवर्धन कैसे करें। प्राकृतिक रूप से उगाई गई सरसों से शुद्ध कच्ची घानी का तेल निकालना, गिर गाय का शुद्ध घी तैयार करना, दालों और मसालों की साफ-सफाई, उनकी ब्रांडिंग और आकर्षक पैकेजिंग करके उन्हें सीधे जयपुर और अन्य बड़े शहरों के ग्राहकों और सुपरमार्केट तक पहुंचाना सिखाया गया।

आज दूदू की तस्वीर धीरे-धीरे बदल रही है। जो युवा कल तक कारखानों के धुएं और नशे के अंधकार में खोए हुए थे, वे आज अपने खुद के कृषि-आधारित व्यवसाय शुरू कर रहे हैं। जब उनकी जेब में सम्मानजनक कमाई आने लगी, तो नशे की लत और अपराध का ग्राफ अपने आप नीचे आने लगा। एस.पी.जी.वी.एस. और 1300 किसानों की इस एकजुटता ने यह साबित कर दिया है कि यदि सही दिशा, तकनीकी ज्ञान और उद्यमिता का साथ मिले, तो खेती आज भी सबसे उत्तम और लाभकारी व्यवसाय बन सकती है।

बाल विवाह पर बदलने लगी गांव की सोच

यह कहानी एक ऐसी लड़की की है, जिसकी शादी तय हो चुकी थी, लेकिन वह अभी पढ़ना चाहती थी। लेकिन समाज के दबाव और परिवार की मजबूरी के बीच उसकी आवाज़ दब रही थी। सही समय पर संस्था के हस्तक्षेप ने न केवल एक शादी रोकी, बल्कि एक जीवन को नई दिशा दी।

झारखंड के गिरिडीह जिले के तीसरी प्रखंड के छोटे से गांव गुमगी में एक घर शादी की तैयारियों में लगा हुआ था। आंगन में मेहमानों की भीड़ थी, बच्चे खुशी से इधर-उधर दौड़ रहे थे और महिलाएं पारंपरिक गीत गा रही थीं। घर के हर कोने में उत्सव का माहौल था-दीवारों पर झालरें, दरवाजे पर रंगोली और रसोई में पकवानों की खुशबू फैली हुई थी। लेकिन इस बाहरी खुशी के पीछे एक ऐसी सच्चाई छिपी थी, जो उस घर की सबसे बड़ी चिंता थी।

सचिन कुमार
आशा किरण सेवा संस्थान,
गिरीडीह, झारखंड

वह लड़की, जिसकी शादी होने जा रही थी, अपने कमरे के एक कोने में चुपचाप बैठी थी। उसकी आंखें नम थीं और चेहरा उदास था। बाहर की हंसी-खुशी से बिल्कुल अलग, उसके मन में एक तूफान चल रहा था। वह अभी नाबालिग थी, लेकिन उसके सपने बहुत बड़े थे। वह पढ़ना चाहती थी, कुछ बनना चाहती थी और अपने माता-पिता का नाम रोशन करना चाहती थी। उसकी किताबें अभी भी उसके पास रखी थीं, जैसे वे उसे पुकार रही हों कि उसका सफर अभी बाकी है। लेकिन उसकी आवाज किसी ने नहीं सुनी। उसके माता-पिता ने समाज के डर और लोकलाज के दबाव में उसकी शादी तय कर दी थी।

इसी गांव में आशा किरण सेवा संस्थान के कुछ युवा कार्यकर्ता सक्रिय थे। एक दिन उन्हें इस शादी की जानकारी मिली। उन्होंने इसे केवल एक शादी नहीं, बल्कि एक गंभीर सामाजिक समस्या के रूप में देखा। संस्था ने तुरंत बैठक की और हस्तक्षेप का निर्णय लिया। काजल नामक कार्यकर्ता को जिम्मेदारी दी गई। काजल लड़की से मिली और उससे बातचीत की। शुरुआत में वह झिझकी, लेकिन धीरे-धीरे उसने अपने दिल की बात बताई-वह पढ़ना चाहती थी और शादी नहीं करना चाहती थी।

इसके बाद काजल ने लड़की के माता-पिता से बात की और उन्हें समझाया कि कम उम्र में शादी करना कानूनन अपराध है और इससे उनकी बेटी का भविष्य प्रभावित होगा। लेकिन माता-पिता तुरंत तैयार नहीं हुए। स्थिति गंभीर होने पर संस्था की कार्यकर्ता ने चाइल्ड हेल्पलाइन 1098 से संपर्क किया। प्रशासन सक्रिय हुआ और जांच के

बाद शादी रुकवा दी गई।

शादी रुकने के बाद धीरे-धीरे माता-पिता को अपनी गलती का एहसास हुआ और उन्होंने बेटी की पढ़ाई जारी रखने का निर्णय लिया। आज वही लड़की कक्षा 11 तक पहुंच चुकी है और आत्मविश्वास के साथ अपने सपनों की ओर बढ़ रही है। गांव में भी बदलाव आया है और लोग अब बाल विवाह के खिलाफ सोचने लगे हैं। आशा किरण सेवा संस्थान का यह प्रयास केवल एक लड़की की जिंदगी बदलने तक सीमित नहीं रहा, बल्कि एक पूरी सोच को बदलने की शुरुआत बन गया।

कहानियां दिलों को जोड़ती हैं,
और समाज को बदलती हैं।

बेटियों के सिसकते सपने

झारखंड के देवघर जिले का आंध्रीगादर गांव प्राकृतिक सुंदरता से भरा है, लेकिन यहां की बेटियों के सपने कठिन परिस्थितियों में सिसकते हैं। शिक्षा की चाहत होने के बावजूद खराब रास्ते, जंगलों का डर और संसाधनों की कमी उनके कदम रोक देती है। यह कहानी बताती है कि कैसे भौगोलिक और सामाजिक परिस्थितियां मिलकर बेटियों के भविष्य को सीमित कर देते हैं।

खुशबू राय
देवघर झारखंड

झारखंड के देवघर जिले में स्थित आंध्रीगादर गांव अपनी प्राकृतिक खूबसूरती के लिए जाना जा सकता है, लेकिन यहां की असलियत उस सुंदरता से कहीं अलग और कठोर है। चारों ओर फैले ऊंचे-नीचे पहाड़, घने जंगल और पथरीले रास्ते इस गांव को जैसे दुनिया से अलग कर देते हैं। 'बाबा नगरी' के रूप में प्रसिद्ध देवघर जिला भले ही धार्मिक आस्था का केंद्र हो, लेकिन उसके इन दूरस्थ इलाकों में रहने वाली बेटियों के लिए जीवन हर दिन एक चुनौती की तरह सामने आता है। यहां की किशोरियों की आंखों में भी बड़े सपने पलते हैं-कोई डॉक्टर बनना चाहती है, कोई शिक्षक, तो कोई अपने परिवार की हालत सुधारने का सपना देखती है-लेकिन इन सपनों के रास्ते में सबसे बड़ी बाधा वही रास्ते हैं जिन पर चलकर उन्हें स्कूल या कॉलेज पहुंच ना होता है।

आंध्रीगादर की भौगोलिक बनावट ही यहां की बेटियों की शिक्षा की सबसे बड़ी दुश्मन बन चुकी है। गांव से बाहर निकलते ही ऊबड़-खाबड़ पगडंडियां शुरू हो जाती हैं, जो घने जंगलों के बीच से होकर गुजरती हैं। इन रास्तों पर कई किलोमीटर पैदल चलकर ही नजदीकी स्कूल या कॉलेज तक पहुंचा जा सकता है। बरसात के दिनों में ये रास्ते और भी खतरनाक हो जाते हैं-कीचड़, फिसलन और छोटे-छोटे नाले पार करना किसी जोखिम से कम नहीं होता। ऐसे में हर दिन स्कूल जाना किसी साहसिक यात्रा जैसा हो जाता है।

जब गांव के अभिभावकों से पूछा जाता है कि वे अपनी बेटियों को आगे पढ़ने के लिए क्यों नहीं भेजते, तो उनके जवाब में मजबूरी साफ झलकती है। वे कहते हैं कि इन सुनसान रास्तों पर जंगली जानवरों का डर बना रहता है, और साथ ही असामाजिक तत्वों का भय भी उन्हें परेशान करता है। एक पिता के लिए यह फैसला आसान नहीं होता कि वह अपनी बेटी को ऐसे रास्तों से रोज़ गुजरने के लिए अकेला भेजे। धीरे-धीरे यह डर बेटियों की पढ़ाई पर भारी पड़ने लगता है और कई लड़कियां बीच में ही स्कूल छोड़ने को मजबूर हो जाती हैं।

इसका असर सिर्फ शिक्षा तक सीमित नहीं रहता, बल्कि पूरे समाज पर पड़ता है। जब लड़कियां पढ़ाई छोड़ देती हैं, तो उनका अधिकांश समय घर के कामों या खेतों में बीतने लगता है। आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों में यह और भी आम है, जहां पढ़ाई को एक अतिरिक्त बोझ की तरह देखा जाने लगता है। ऐसे हालात में बाल विवाह जैसी कुरीतियां भी जन्म लेती हैं। अभिभावक सोचते हैं कि जब बेटी की पढ़ाई आगे नहीं बढ़ सकती और उसे घर से बाहर भेजना सुरक्षित नहीं है, तो उसकी जल्दी शादी कर देना ही बेहतर विकल्प है। इस तरह, कई लड़कियों के सपने उनकी कम उम्र में ही खत्म हो जाते हैं।

आंध्रीगादर की यह स्थिति यह स्पष्ट रूप से दिखाती है कि विकास सिर्फ बड़े शहरों तक सीमित नहीं रह सकता। जब तक गांवों तक पक्की सड़कें, सुरक्षित परिवहन और बुनियादी सुविधाएं नहीं पहुंचेंगी, तब तक महिला सशक्तिकरण की बातें अधूरी ही रहेंगी। यहां की लड़कियां किसी से कम नहीं हैं-उनमें भी वही क्षमता, वही उत्साह और वही सपने हैं जो शहरों की लड़कियों में होते हैं-लेकिन उनके रास्ते ही उन्हें आगे बढ़ने से रोक देते हैं।

आज जरूरत है कि प्रशासन और समाज मिलकर इन चुनौतियों का समाधान खोजें। अगर इन दुर्गम रास्तों को आसान बनाया जाए, सुरक्षित परिवहन की व्यवस्था हो और शिक्षा तक पहुंच सुनिश्चित की जाए, तो यही बेटियां अपने परिवार और समाज के लिए नई पहचान बना सकती हैं। आंध्रीगादर की कहानी सिर्फ एक गांव की नहीं है, बल्कि उन सभी क्षेत्रों की सच्चाई है जहां विकास की रोशनी अभी पूरी तरह नहीं पहुंच पाई है। जब तक इन पहाड़ों और जंगलों के बीच बसे गांवों तक यह रोशनी नहीं पहुंचेगी, तब तक यहां की बेटियों के सपने यूं ही सिसकते रहेंगे।

कहानी सिर्फ अनुभव नहीं होती,
वह परिवर्तन का दस्तावेज होती है।

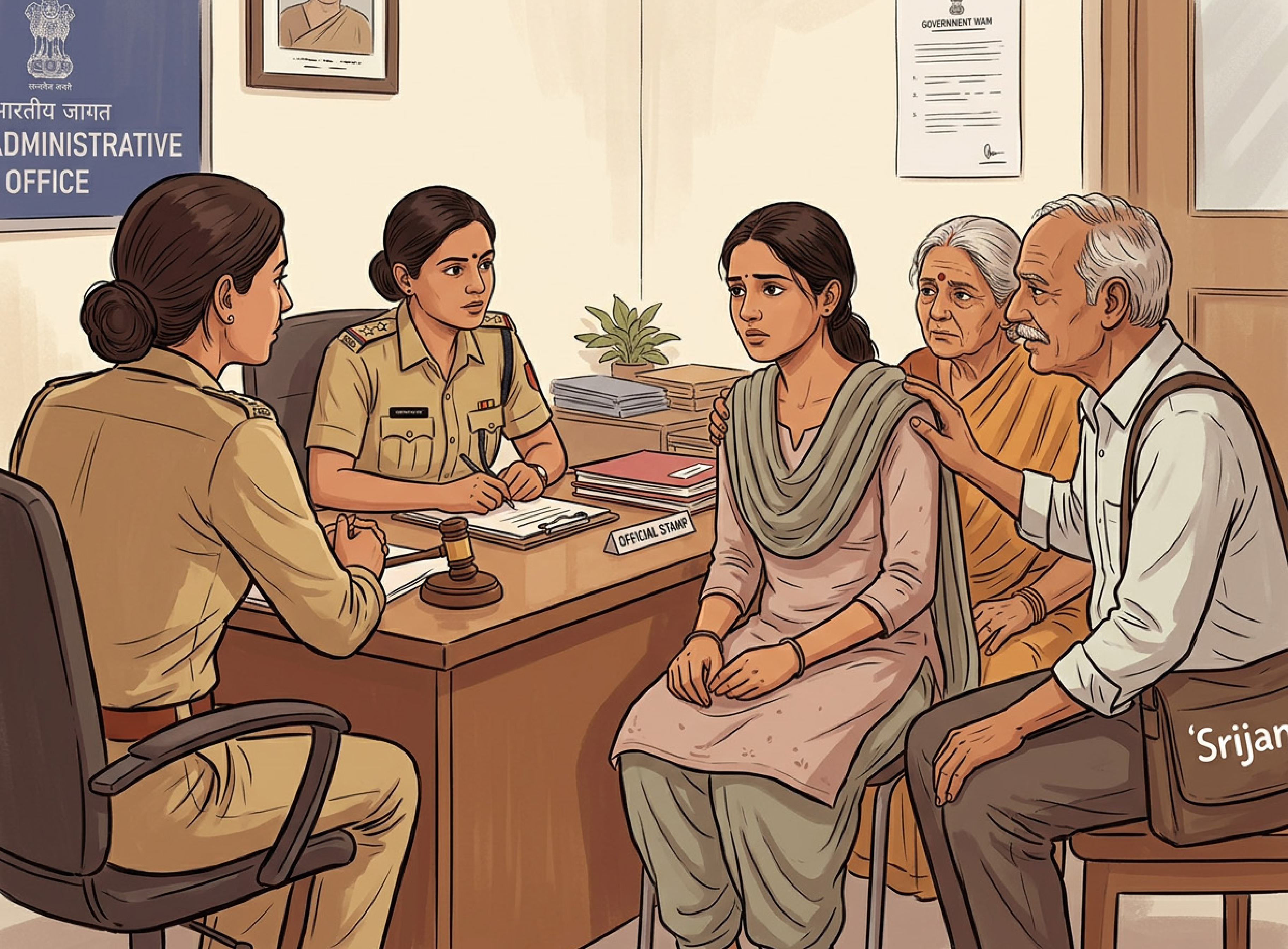
भारतीय जागत
ADMINISTRATIVE
OFFICE
GOVERNNENT WAM
OFFICIAL STAMP
'Srijan

एक अबोलता का न्याय के लिए संघर्ष

महासमुंद के एक छोटे और शांत गांव में रहने वाली वह लड़की अपनी दुनिया इशारों में जीती थी। वह बोल नहीं सकती थी, लेकिन उसकी मुस्कान उसकी सबसे बड़ी पहचान थी। उसकी आंखें और उसके हाथ ही उसकी भाषा थे, जिनसे वह अपने भाव और अपनी बातें व्यक्त करती थी। उसका जीवन सादगी से भरा था, और वह अपने परिवार के बीच सुरक्षित महसूस करती थी। लेकिन वर्ष 2023 की एक रात ने उसकी जिंदगी को पूरी तरह बदल दिया।

लतिका सिंह
श्री जन संस्था महासमुंद,
छतीसगढ़

महासमुंद के एक शांत गांव में रहने वाली एक मूकबधिर लड़की अनमोल (परिवर्तित नाम) की जिंदगी एक दर्दनाक घटना से बदल गई। उसकी खामोशी को कमजोरी समझकर उसके साथ अन्याय किया गया, लेकिन उसने हार नहीं मानी। परिवार और संस्था के सहयोग से उसने न्याय की राह पकड़ी। यह कहानी दर्द के बीच जन्मी उस हिम्मत की है, जो आज भी उम्मीद बनकर जीवित है।

महासमुंद के एक छोटे और शांत गांव में रहने वाली वह लड़की अपनी दुनिया इशारों में जीती थी। वह बोल नहीं सकती थी, लेकिन उसकी मुस्कान उसकी सबसे बड़ी पहचान थी। उसकी आंखें और उसके हाथ ही उसकी भाषा थे, जिनसे वह अपने भाव और अपनी बातें व्यक्त करती थी। उसका जीवन सादगी से भरा था, और वह अपने परिवार के बीच सुरक्षित महसूस करती थी। लेकिन वर्ष 2023 की एक रात ने उसकी जिंदगी को पूरी तरह बदल दिया। नशे में धुत एक युवक ने उसकी इस खामोशी को उसकी कमजोरी समझ लिया और उसके साथ जघन्य कृत्य किया। यह सिर्फ एक बार नहीं हुआ, बल्कि लंबे समय तक वह इस अत्याचार का शिकार होती रही।

उसकी सबसे बड़ी मजबूरी यह थी कि वह अपनी पीड़ा को शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकती थी। वह मानसिक रूप से भी थोड़ी कमजोर थी, जिससे उसके लिए अपनी बात समझा पाना और भी कठिन हो गया था। परिवार के लोग उसके बदले हुए व्यवहार को महसूस तो कर रहे थे-उसकी डरी हुई आंखें, कांपते हाथ और सहमा हुआ चेहरा बहुत कुछ कह रहा था-लेकिन वे उसकी खामोशी को समझ नहीं पा रहे थे। धीरे-धीरे समय बीतता गया और यह दर्द उसके भीतर ही दबता रहा।

कुछ महीनों बाद जब उसके शरीर में बदलाव दिखने लगे, तब परिवार को यह अहसास हुआ कि कुछ गंभीर गलत हुआ है। उसकी माँ, जो उसकी इशारों की भाषा को सबसे बेहतर समझती थी, ने उससे पूछने की कोशिश की। बहुत साहस जुटाकर उसने इशारों में बताया कि उसके साथ एक युवक ने यह कृत्य किया है-वह युवक कोई अजनबी नहीं था, बल्कि दूर का रिश्तेदार था, जिसे वह पहचानती थी। यह सच सामने आते ही परिवार के पैरों तले जमीन खिसक गई।

इसके बाद शुरू हुआ न्याय के लिए संघर्ष। पुलिस और प्रशासन के साथ संवाद करना आसान नहीं था, क्योंकि पीड़िता अपनी बात स्पष्ट रूप से नहीं रख पा रही थी। हर कदम पर कठिनाई थी-कानूनी प्रक्रियाएं, समाज की नजरें और भीतर का डर। लेकिन इस बार वह अकेली नहीं थी। उसका परिवार उसके साथ मजबूती से खड़ा था। इसी दौरान एक संस्था 'श्रीजन' का हस्तक्षेप हुआ, जिसने इस मुश्किल समय में उसका साथ दिया। संस्था ने दुभाषिए की व्यवस्था की, ताकि पीड़िता अपनी बात सही तरीके से रख सके। उसे कानूनी सहायता दी गई और मानसिक रूप से भी मजबूत बनाने का प्रयास किया गया।

संस्था के सहयोग से एफआईआर दर्ज हुई और मामला आगे बढ़ा। आरोपी को गिरफ्तार किया गया और केस अदालत तक पहुंचा। जिला विधिक सेवा प्राधिकरण ने पीड़िता को अंतरिम क्षतिपूर्ति राशि भी प्रदान की। घटना के कारण वह गर्भवती हो गई थी, इसलिए बाल कल्याण समिति ने भी उसकी सुरक्षा और अधिकारों को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

आज वह पीड़िता अपनी एक साल की बेटी के साथ अपने घर में रह रही है। उसका परिवार उसके साथ है, जो उसके लिए सबसे बड़ी ताकत है। उसके भीतर उस घटना का दर्द आज भी कहीं गहराई में मौजूद है, लेकिन अब उसकी जिंदगी में एक नई उम्मीद भी है-उसकी बेटी। वह अपने बच्चे के लिए मजबूत बन रही है, उसे एक बेहतर भविष्य

देना चाहती है। न्याय की प्रक्रिया अभी भी जारी है। अदालत में मामला चल रहा है और हर तारीख उसके धैर्य की परीक्षा लेती है। फिर भी उसने हार नहीं मानी है। उसकी आंखों में आज भी एक उम्मीद है कि एक दिन उसे न्याय जरूर मिलेगा। उसकी खामोशी आज भी बहुत कुछ कहती है-दर्द, संघर्ष, लेकिन सबसे ज्यादा हिम्मत और विश्वास।

यह कहानी सिर्फ एक मूकबधिर पीड़िता की नहीं है, बल्कि उन अनगिनत लोगों की सच्चाई है, जो अपनी आवाज दुनिया तक नहीं पहुंचा पाते। यह हमें सोचने पर मजबूर करती है कि क्या हमारा समाज और हमारी व्यवस्था इतनी संवेदनशील है कि हर व्यक्ति, चाहे वह किसी भी स्थिति में हो, आसानी से न्याय पा सके। आज जरूरत है कि हम अपनी व्यवस्था को और अधिक समावेशी और मानवीय बनाएं, ताकि कोई भी पीड़ित अपनी आवाज के अभाव में न्याय से वंचित न रह जाए। यह कहानी दर्द से भरी जरूर है, लेकिन इससे भी ज्यादा यह हिम्मत, साहस और उम्मीद की कहानी है-जो हमें सिखाती है कि हर इंसान सम्मान और न्याय का हकदार है।

आँगनवाड़ी केंद्र
जतन संस्थान
साझी पहल
आँगनवाड़ी
साझी पहल

सामूहिक 'जतन' से मॉडल बनी आंगनवाड़ियां

राजसमंद जिले के आंगनवाड़ी केंद्र कभी बुनियादी सुविधाओं के अभाव में जूझ रहे थे तब जतन संस्थान ने एक साझी पहल शुरू की। यह एक ऐसा प्रयास था, जिसमें संस्था, समुदाय और प्रशासन तीनों की साझेदारी देखने को मिली। इन प्रयासों का परिणाम धीरे-धीरे सामने आने लगा। आज 25 आंगनवाड़ी केंद्र पूरी तरह से रंग-बिरंगे, स्वच्छ, सुरक्षित और मॉडल केंद्र के रूप में विकसित हो चुके हैं।

ऊषा चौधरी
जतन संस्था
राजसमंद, राजस्थान

गांवों में आंगनवाड़ी केंद्र बच्चों और माताओं के लिए सबसे महत्वपूर्ण आधार होते हैं, लेकिन अक्सर इन केंद्रों की स्थिति संतोषजनक नहीं होती। राजसमंद जिले के दो ब्लॉकों में स्थित लगभग 300 आंगनवाड़ी केंद्रों की स्थिति भी कुछ ऐसी ही थी। कई केंद्र जर्जर भवनों में संचालित हो रहे थे, जहां वर्षों से रंग-रोगन नहीं हुआ था। शौचालयों का अभाव था और पीने के पानी की कोई समुचित व्यवस्था नहीं थी। ये केंद्र, जो बच्चों के पोषण, देखभाल और प्रारंभिक शिक्षा के लिए बनाए गए थे, खुद ही बुनियादी सुविधाओं से वंचित थे।

करीब दो वर्ष पहले, जब जतन संस्थान को इस क्षेत्र में बच्चों की प्रारंभिक देखभाल और सेवाओं को सशक्त करने के उद्देश्य से कार्य करने का अवसर मिला, तो सबसे पहले इन केंद्रों की भौतिक स्थिति ने ध्यान आकर्षित किया। यह स्पष्ट था कि जब तक केंद्रों की आधारभूत सुविधाएं सुदृढ़ नहीं होंगी, तब तक गुणवत्तापूर्ण सेवाएं प्रदान करना संभव नहीं होगा। जतन संस्थान का मानना रहा है कि हर समस्या का समाधान उसी समुदाय के भीतर मौजूद होता है, जहां वह समस्या उत्पन्न होती है। इसी सोच के साथ संस्थान ने इस मुद्दे को केवल एक भौतिक कमी के रूप में नहीं, बल्कि एक सामुदायिक और संस्थागत चुनौती के रूप में देखा।

संस्थान ने यह समझा कि स्थायी बदलाव तभी संभव है जब समुदाय और पंचायत स्वयं इन केंद्रों के सुधार की जिम्मेदारी लें। इस दिशा में पहला कदम था आंगनवाड़ी निगरानी समितियों को सक्रिय करना, जो हर केंद्र पर पहले से ही मौजूद थीं, लेकिन निष्क्रिय पड़ी थीं। जतन ने इन समितियों के पुनर्गठन की पहल की। सुनिश्चित किया गया कि इनमें समुदाय के सदस्य, अभिभावक, पंचायत प्रतिनिधि, आंगनवाड़ी कार्यकर्ता और संबंधित विभाग के लोग शामिल हों। बैठकों का नियमित आयोजन शुरू हुआ, जहां समिति के सदस्यों को उनकी भूमिकाओं और

जिम्मेदारियों के बारे में विस्तार से बताया गया।

धीरे-धीरे इन समितियों में जागरूकता आई और उन्होंने सक्रिय भूमिका निभाना शुरू किया। बैठकों में केंद्रों की समस्याओं को खुलकर रखा जाने लगा, उन पर चर्चा हुई और समाधान के लिए प्रस्ताव तैयार किए गए। इन प्रस्तावों का लगातार फॉलोअप किया गया, जब तक कि आंगनवाड़ी से जुड़े मुद्दों को ग्राम पंचायत विकास योजना (GPDP) में शामिल नहीं कर लिया गया। इसके परिणामस्वरूप कई पंचायतों ने आंगनवाड़ी भवनों की मरम्मत, रंग-रोगन, शौचालय निर्माण और पानी की व्यवस्था के लिए फंड स्वीकृत किए।

कुछ गांवों में समुदाय के लोग भी आगे आए और भामाशाह की भूमिका निभाते हुए उन्होंने केंद्रों के सुधार में आर्थिक योगदान

दिया। इस पूरी प्रक्रिया में जतन संस्थान ने हर स्तर पर सहयोग किया- चाहे वह तकनीकी मार्गदर्शन हो, विभागों के साथ समन्वय हो या फिर पंचायतों के साथ पैरवी करना हो। यह एक ऐसा प्रयास था, जिसमें संस्था, समुदाय और प्रशासन तीनों की साझेदारी देखने को मिली। इन प्रयासों का परिणाम धीरे-धीरे सामने आने लगा। आज 25 आंगनवाड़ी केंद्र पूरी तरह से रंग-बिरंगे, स्वच्छ, सुरक्षित और मॉडल केंद्र के रूप में विकसित हो चुके हैं। यहां बच्चों के बैठने और खेलने की उचित व्यवस्था है, स्वच्छ पेयजल उपलब्ध है और शौचालय की सुविधा भी सुनिश्चित की गई है। इसके अलावा, 200 से अधिक केंद्रों की निगरानी समितियां अब सक्रिय रूप से केंद्रों के संचालन और निगरानी में अपनी भूमिका निभा रही हैं।

आज स्थिति यह है कि जब भी आंगनवाड़ी केंद्रों के सुधार की बात होती है, तो कार्यकर्ता, विभाग और प्रशासन स्वयं जतन संस्थान से सहयोग और मार्गदर्शन की अपेक्षा करते हैं। यह बदलाव केवल भौतिक सुधार तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामुदायिक जागरूकता और सहभागिता का एक मजबूत उदाहरण बन चुका है। जतन संस्थान के लिए यह सिर्फ एक परियोजना नहीं, बल्कि एक व्यापक दृष्टिकोण है-जहां समुदाय की सजगता, पंचायत की भागीदारी और संस्थान की निरंतर पहल मिलकर बच्चों, महिलाओं और पूरे समाज के जीवन स्तर को बेहतर बनाने की दिशा में काम कर रही है। यह कहानी बताती है कि यदि सही दिशा में सामूहिक प्रयास किए जाएं , तो किसी भी समस्या का समाधान संभव है और बदलाव की शुरुआत हमेशा वहीं से होती है, जहां समस्या मौजूद होती है।

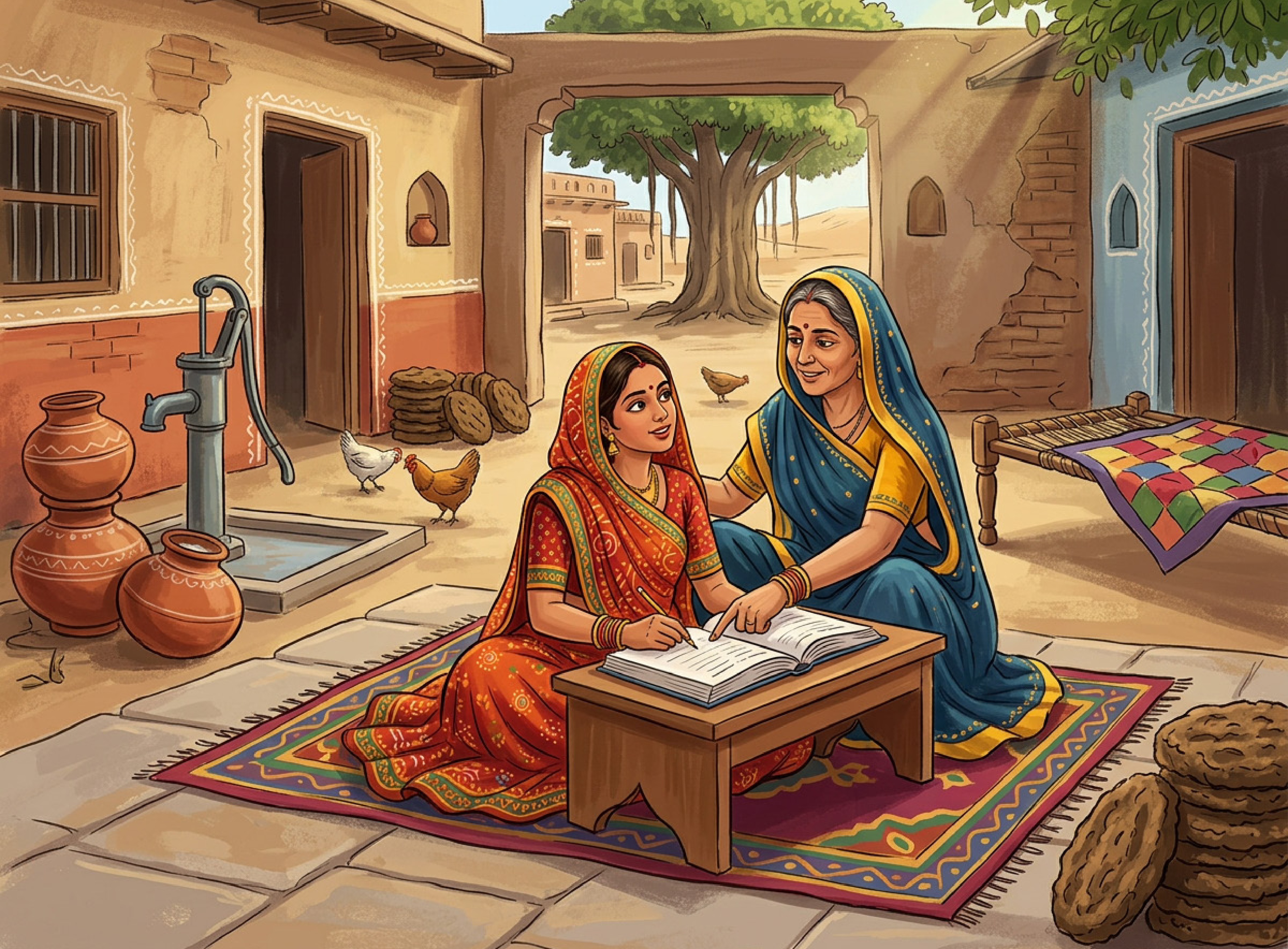

पढ़ाई का सपना पूरा करने सास ने दी हिम्मत

अक्सर समाज में सास और बहू के रिश्ते को अलग नजर से देखा जाता है, लेकिन मेरे लिए मेरी सासू माँ एक सहारा बनकर सामने आईं। उन्होंने मुझे आगे बढ़ने के लिए न केवल प्रेरित किया, बल्कि हर कदम पर मेरा साथ भी दिया, इसी का नतीजा है कि मैं आज मैं 12 वीं की पढ़ाई कर रही हूं। यह कहानी है एक ऐसी बहू की जिसे कम उम्र में विवाह के कारण पढ़ाई छोड़नी पड़ी।

राघवेंद्र सेवड़ा
एजुकेट गर्ल
जयपुर, राजस्थान

सपना (परिवर्तित नाम) बताती है कि मेरे जीवन का सबसे बड़ा सपना पढ़-लिखकर कुछ बनने का था, लेकिन परिस्थितियों ने मुझे उस रास्ते से बहुत जल्दी हटा दिया। मैंने आठवीं कक्षा तक पढ़ाई की थी, पर घर की आर्थिक स्थिति और पारिवारिक जिम्मेदारियों के कारण मेरी पढ़ाई बीच में ही छूट गई। मेरे परिवार में तीन बहनें थीं, और जैसे ही बड़ी बहनों की शादी हुई, घर की जिम्मेदारियां और बढ़ गईं। इसी बीच मेरी भी कम उम्र में शादी हो गई। उस समय यह समझ ही नहीं थी कि मेरे अपने सपनों का क्या होगा, बस परिवार की परिस्थितियां ही सब कुछ तय कर रही थीं।

शादी के बाद मैं कुछ समय तक अपने मायके में रही और फिर ससुराल आ गई। यहां आकर जीवन पूरी तरह बदल गया। घर के काम, परिवार की देखभाल और बाद में बच्चों की जिम्मेदारियां -इन सबके बीच मेरा खुद का सपना कहीं पीछे छूट गया। कई बार ऐसा लगता था कि अब पढ़ाई सिर्फ एक अधूरा ख्वाब बनकर ही रह जाएगी। लेकिन दिल के किसी कोने में पढ़ने की इच्छा अब भी जिंदा थी, जो कभी-कभी मुझे सोचने पर मजबूर कर देती थी कि काश मुझे एक और मौका मिल पाता।

इसी दौरान एक दिन मेरी एक सहेली ने मुझे बताया कि हमारे गांव में "प्रगति कार्यक्रम" शुरू होने वाला है। उसने कहा कि इस कार्यक्रम के माध्यम से उन महिलाओं और लड़कियों को फिर से पढ़ने का अवसर दिया जाता है, जिनकी पढ़ाई किसी कारणवश छूट गई थी। उसने मुझे बताया कि इसके तहत स्टेट ओपन स्कूल से 10वीं की परीक्षा दी जा सकती है और गांव में इसके लिए एक कैंप भी लगाया जाएगा, जहां पढ़ाई में मदद मिलेगी। उसकी बात सुनकर मेरे मन में एक नई उम्मीद जगी, लेकिन साथ ही डर भी था-क्या मैं इतने सालों बाद फिर से पढ़ाई कर पाऊंगी?

हमारी यह बातचीत मेरी सासू माँ ने भी सुन ली थी। उन्होंने मुझसे बहुत ही सरल शब्दों में कहा, "अगर तुम्हारा मन है, तो तुम्हें जरूर पढ़ाई फिर से शुरू करनी चाहिए।" उनके इन शब्दों ने मेरे अंदर जैसे नई ऊर्जा भर दी। अक्सर समाज में सास और बहू के रिश्ते को अलग नजर से देखा जाता है, लेकिन मेरे लिए मेरी सासू माँ एक सहारा बनकर सामने आईं। उन्होंने मुझे आगे बढ़ने के लिए न केवल प्रेरित किया, बल्कि हर कदम पर मेरा साथ भी दिया।

उनकी प्रेरणा से मैंने स्टेट ओपन स्कूल में अपना नामांकन करवाया और गांव में लगने वाले प्रगति कैंप में नियमित रूप से जाने लगी। हर दिन लगभग तीन घंटे मैं पढ़ाई के लिए समय निकालती थी। यह आसान नहीं था, क्योंकि घर के काम और बच्चों की देखभाल के बीच पढ़ाई के लिए समय निकालना एक बड़ी चुनौती थी। कई बार थकान इतनी होती थी कि लगता था अब और नहीं हो पाएगा, लेकिन फिर अपने सपनों को याद करके मैं खुद को संभाल लेती थी।

धीरे-धीरे पढ़ाई में मेरा आत्मविश्वास बढ़ने लगा। शिक्षकों और साथियों का सहयोग मिला, जिससे मुझे और भी प्रेरणा मिली। मैंने ठान लिया था कि इस बार मैं अपने सपनों को अधूरा नहीं छोड़ूंगी। मेरी मेहनत रंग लाई, जब मैंने 10वीं की परीक्षा पहली ही कोशिश में 81 प्रतिशत अंकों के साथ पास की। इतना ही नहीं, मैंने अपने जिले में प्रथम स्थान भी प्राप्त किया। यह मेरे जीवन का वह पल था, जब मुझे लगा कि अगर इंसान ठान ले, तो कुछ भी असंभव नहीं है।

मेरी इस उपलब्धि के लिए मुझे राज्य सरकार द्वारा "मीरा पुरस्कार" से सम्मानित किया गया। यह सिर्फ एक पुरस्कार नहीं था, बल्कि मेरे संघर्ष, मेहनत और आत्मविश्वास की पहचान थी। इस सम्मान ने मुझे यह एहसास दिलाया कि मेरी मेहनत सच में मायने रखती है और

मैं भी अपने जीवन में कुछ बड़ा कर सकती हूं । आज मैं पहले से कहीं ज्यादा आत्मविश्वासी हूं। अब मेरा सपना सिर्फ खुद तक सीमित नहीं है, बल्कि मैं अपने जैसी अन्य महिलाओं और बच्चों की भी मदद करना चाहती हूं, ताकि वे भी अपने सपनों को पूरा कर सकें। मैं हाई कोर्ट में चतुर्थ श्रेणी के पद की तैयारी कर रही हूं और साथ ही 12वीं कक्षा की पढ़ाई भी जारी रखने का निर्णय लिया है।

आज जब मैं पीछे मुड़कर देखती हूं, तो महसूस होता है कि जीवन में कठिनाइयां जरूर आती हैं, लेकिन वे हमें रोकने के लिए नहीं, बल्कि मजबूत बनाने के लिए होती हैं। अगर उस दिन मैंने हिम्मत नहीं जुटाई होती, अगर मेरी सासू माँ ने मेरा साथ नहीं दिया होता, तो शायद मैं आज भी अपने अधूरे सपनों के साथ ही जी रही होती। मेरी कहानी यही सिखाती है कि सपने कभी मरते नहीं हैं, बस उन्हें फिर से जीने के लिए एक मौके और थोड़ी हिम्मत की जरूरत होती है। अगर परिवार का साथ मिल जाए और खुद पर विश्वास हो, तो कोई भी बाधा हमें आगे बढ़ने से नहीं रोक सकती।

प्राथमिक शाला, घोचीबहरा

समधान की ओर बढ़ते कदम

यह कहानी है छत्तीसगढ़ के एक छोटे से गांव घोघीबहरा की, जहां संसाधनों की कमी के बावजूद लोगों ने हार नहीं मानी। जब प्रशासन से मदद नहीं मिली, तो ग्रामीणों ने खुद एकजुट होकर अपने गांव के बच्चों के पढ़ने के लिए अतिरिक्त कक्ष का निर्माण कर लिया।

विष्णु प्रिया ठाकुर
श्री जन कल्याण संस्था,
महासमुंद, छतीसगढ़

छत्तीसगढ़ के महासमुंद जिले से लगभग 15 किलोमीटर दूर स्थित छोटा-सा गांव घोघीबहरा कभी शिक्षा की गंभीर समस्या से जूझ रहा था। गांव का प्राथमिक स्कूल केवल एक ही कमरे में चलता था, जहां कक्षा 1 से लेकर 5वीं तक के 57 बच्चे एक साथ बैठकर पढ़ने को मजबूर थे। एक ही कमरे में इतनी अलग-अलग कक्षाओं के बच्चों का बैठना न केवल उनके सीखने में बाधा बन रहा था, बल्कि शिक्षक के लिए भी सभी को बराबर ध्यान देना बेहद कठिन हो जाता था। बच्चों का भविष्य जैसे एक कमरे की सीमाओं में कैद होकर रह गया था, और यह स्थिति पूरे गांव के लिए चिंता का विषय बन चुकी थी।

साल 2018 में जब श्री जन कल्याण संस्था ने गांव में काम करना शुरू किया, तब इस समस्या पर विशेष ध्यान दिया गया। संस्था ने न केवल इस स्थिति को समझा, बल्कि इसे बदलने के लिए ठोस प्रयास भी शुरू किए। ग्रामीणों के साथ मिलकर कई बार जनप्रतिनिधियों और जिला कलेक्टर तक इस समस्या को पहुंचाया गया। सभी को उम्मीद थी कि जल्द ही कोई समाधान निकलेगा और बच्चों के लिए एक अतिरिक्त कक्षा का निर्माण कराया जाएगा। लेकिन समय बीतता गया और किसी भी विभाग की ओर से कोई ठोस पहल नहीं हुई। बार-बार की कोशिशों के बावजूद जब कोई सकारात्मक परिणाम सामने नहीं आया, तो लोगों के मन में निराशा घर करने लगी।

ऐसे समय में संस्था ने गांव में एक महत्वपूर्ण बैठक आयोजित की। इस बैठक में संस्था प्रमुख ने ग्रामीणों से सीधी और सरल बात की। उन्होंने समझाया कि अगर वे सब मिलकर प्रयास करें, तो इस समस्या का समाधान वे खुद भी कर सकते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि अतिरिक्त कक्षा बनाने के लिए जरूरी संसाधन गांव और आसपास ही उपलब्ध हैं-जंगल से लकड़ी मिल सकती है और घरों में रखे खप्पर काम आ सकते हैं। जरूरत केवल एकजुट होकर काम करने की है।

हरिभूमि

रायपुर - महासमुंद भूमि

Date 29 Jun 2022

पहल : बच्चों को जर्जर भवन में भेजने से भयभीत हैं ग्रामीण

पढ़ाई प्रभावित न हो इसलिए ग्रामीण श्रमदान कर बना रहे अस्थाई स्कूल

तैयार हो रहा अस्थाई कक्ष

आपस में जुटाई रकम और किया श्रमदान

अब नहीं होगा बच्चों की पढ़ाई का हर्जा

यह बात ग्रामीणों के दिल को छू गई। उन्हें एहसास हुआ कि वे दूसरों पर निर्भर रहने के बजाय खुद अपनी समस्या का समाधान कर सकते हैं। इसी सोच के साथ पूरे गांव ने एकजुट होकर श्रमदान करने का निर्णय लिया। लोगों ने अपने-अपने काम कुछ दिनों के लिए किनारे रख दिए और सामूहिक प्रयास में जुट गए। लगभग 10 दिनों तक लगातार मेहनत की गई। महिलाओं ने इसमें प्रमुख भूमिका निभायी, कोई जंगल

से लकड़ी लाया तो किसी ने प्लास्टिक की छांव तैयार की तो किसी ने मिट्टी से लिपाई-छपाई कर दी। इस तरह पूरे गांव ने मिलकर एक अतिरिक्त कक्ष (कुटिया) का निर्माण कर लिया।

यह केवल एक कक्षा का निर्माण नहीं था, बल्कि यह गांव की एकता, सहयोग और आत्मनिर्भरता का प्रतीक बन गया। इस प्रेरणादायक पहल की जानकारी संस्था ने पत्रकारों तक पहुंचाई। जल्द ही यह खबर प्रमुख समाचार पत्रों-पत्रिका, हरिभूमि और नवभारत में प्रकाशित हुई। जब यह खबर प्रशासन तक पहुंची , तब जाकर अधिकारियों का ध्यान इस ओर गया। परिणामस्वरूप, एक वर्ष के भीतर वहां एक पक्का अतिरिक्त कक्षा कक्ष बनवाया गया।

इस पूरी प्रक्रिया ने घोघीबहरा के लोगों को एकता की असली ताकत का अनुभव कराया। उन्होंने यह समझ लिया कि अगर वे मिल-जुलकर काम करें, तो किसी भी समस्या का समाधान संभव है। अब गांव की सोच बदल चुकी थी। पहले जहां वे हर छोटी-बड़ी समस्या के लिए प्रशासन का इंतजार करते थे, वहीं अब वे खुद पहल करने लगे थे।

आज भी गांव की सड़कें पूरी तरह ठीक नहीं हैं, लेकिन अब ग्रामीण इसके लिए किसी के आने का इंतजार नहीं करते। वे खुद मिलकर अस्थायी सड़क बनाने का काम करते हैं, ताकि आने-जाने में सुविधा हो सके। यह बदलाव केवल भौतिक नहीं, बल्कि मानसिकता का भी है-एक ऐसी सोच, जो आत्मनिर्भरता और सहयोग पर आधारित है।

यह कहानी सिर्फ घोघीबहरा गांव की नहीं है, बल्कि उस विश्वास की है जो हमें सिखाता है कि जब लोग एकजुट होते हैं, तो बदलाव निश्चित होता है। "एकता में ही शक्ति है" — यह केवल एक कहावत नहीं, बल्कि एक सच्चाई है, जिसे इस गांव के लोगों ने अपने कर्मों से साबित कर दिखाया है।

ग्राम सभा बैठक -
पंचायत बच्छई, हजारीबाग
महिला सशक्तिकरण
- सबकी भागीदारी

जब ग्राम सभा में पहुंचने लगी महिलाएं

यह कहानी झारखंड के हजारीबाग जिले के ग्राम पंचायत बच्छई की है, जहां कभी ग्राम सभा केवल औपचारिकता बनकर रह गई थी। महिलाओं की भागीदारी बेहद कम थी और उनके मुद्दे अनसुने रह जाते थे। लेकिन जागरूकता, प्रशिक्षण और निरंतर प्रयासों से वही ग्राम सभा आज महिलाओं के नेतृत्व और सक्रिय भागीदारी का सशक्त मंच बन चुकी है।

शंकर लाल राणा
नई दिशा
हजारीबाग, झारखंड

झारखंड के हजारीबाग जिले के चौपारण प्रखंड की बच्छई पंचायत में कुछ साल पहले तक ग्राम सभा की तस्वीर बिल्कुल अलग थी। बैठकें तो नियमित रूप से होती थीं, लेकिन उनमें भागीदारी सीमित रहती थी। गांव के कुछ ही लोग इन बैठकों में शामिल होते थे और अधिकतर निर्णय भी वही कुछ लोग ले लेते थे। बाकी लोगों की भूमिका केवल उपस्थिति दर्ज कराने तक सीमित थी, और रजिस्टर में कार्यवाही लिख दी जाती थी। इस पूरी प्रक्रिया में सामूहिक भागीदारी और पारदर्शिता का अभाव साफ दिखाई देता था।

वर्ष 2022 तक की स्थिति यह थी कि हर ग्राम सभा में औसतन 40 से 50 लोग शामिल होते थे, लेकिन उनमें महिलाओं की संख्या मात्र 5 से 10 प्रतिशत तक ही सीमित रहती थी। जो महिलाएं आती भी थीं, वे अधिकतर चुपचाप बैठी रहती थीं। उनके मन में कई सवाल और समस्याएं होती थीं-पानी की कमी, स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति, बच्चों की शिक्षा, आंगनवाड़ी केंद्रों की समस्याएं। लेकिन इन मुद्दों को कभी भी ग्राम सभा के एजेंडा में जगह नहीं मिल पाती थी। महिलाओं की उपस्थिति तो थी, लेकिन उनकी आवाज़ कहीं खो जाती थी। फिर वर्ष 2023 में इस पंचायत में बदलाव की एक नई शुरुआत हुई, जब “नयी दिशा संस्था” ने यहां काम करना शुरू किया। संस्था का उद्देश्य केवल महिलाओं की संख्या बढ़ाना नहीं था, बल्कि उन्हें जागरूक, आत्मविश्वासी और अपने अधिकारों के प्रति सजग बनाना था। इसके लिए गांव -गांव में छोटी-छोटी बैठकों का आयोजन किया गया। इन बैठकों में महिलाओं को सरल भाषा में समझाया गया कि ग्राम सभा क्या होती है, ग्राम पंचायत विकास योजना (GPDP) में उनकी क्या भूमिका है और वे अपने मुद्दों को प्रभावी तरीके से कैसे सामने रख सकती हैं।

शुरुआत में यह प्रक्रिया आसान नहीं थी। कई महिलाएं हिचकिचाती थीं, कुछ को घर से अनुमति नहीं मिलती थी और कुछ को यह विश्वास ही नहीं था कि उनकी बात सुनी जाएगी। वर्षों से चली आ रही चुप्पी को तोड़ना एक दिन का काम नहीं था। लेकिन संस्था के लगातार संवाद, प्रशिक्षण और प्रेरणा से धीरे-धीरे यह झिझक कम होने लगी। वर्ष 2024 तक आते-आते बदलाव के संकेत स्पष्ट दिखाई देने लगे। ग्राम सभा में महिलाओं की भागीदारी बढ़कर लगभग 35 प्रतिशत हो गई। अब महिलाएं केवल बैठने नहीं आती थीं, बल्कि सवाल पूछने लगी थीं, अपनी समस्याओं को खुलकर साझा करने लगी थीं। उनके भीतर आत्मविश्वास का संचार होने लगा था।

इसके बाद वर्ष 2025 में यह बदलाव और मजबूत हुआ। महिलाओं की उपस्थिति बढ़कर 50 से 55 प्रतिशत तक पहुंच गई। यह केवल संख्या में वृद्धि नहीं थी, बल्कि यह उस सोच में बदलाव का प्रतीक था, जहां महिलाएं अब निर्णय प्रक्रिया का हिस्सा बनने लगी थीं। उनकी आवाज़ को सुना जाने लगा था और उनके मुद्दों को गंभीरता से लिया जाने लगा था। वर्ष 2026 में यह परिवर्तन एक नए स्तर पर पहुंच गया। अब ग्राम सभा में महिलाओं की भागीदारी लगभग 70 प्रतिशत तक हो गई थी। यह एक ऐतिहासिक बदलाव था, जिसने पूरी पंचायत की कार्यप्रणाली को बदलकर रख दिया। जहां पहले ग्राम पंचायत विकास योजना (GPDP) में महिलाओं से जुड़े केवल 2–3 मुद्दे शामिल होते थे, वहीं अब यह संख्या बढ़कर 10–12 तक पहुंच गई।

अब ग्राम सभा में पेयजल की समस्या, आंगनवाड़ी केंद्रों की स्थिति, स्कूलों में शौचालय, स्वच्छता और महिलाओं के लिए आजीविका के अवसर जैसे मुद्दे प्रमुखता से उठाए जाने लगे। इन मुद्दों पर न केवल चर्चा होती थी, बल्कि उनके समाधान के लिए ठोस योजनाएं भी बनाई जाने लगीं। पंचायत स्तर पर अब काम भी दिखने लगा-जहां सड़क की जरूरत थी, वहां सड़क बनाई गई; जहां पानी की समस्या थी, वहां चापानल और जल मीनार लगाए गए। इन कार्यों में महिलाओं

की निगरानी और भागीदारी भी बढ़ी, जिससे कार्यों की गुणवत्ता और पारदर्शिता सुनिश्चित हुई।

अब ग्राम सभा केवल एक औपचारिक बैठक नहीं रह गई थी। यह एक ऐसा मंच बन चुका था, जहां निर्णय किसी एक या दो व्यक्तियों द्वारा नहीं लिए जाते थे, बल्कि सामूहिक रूप से, विशेषकर महिलाओं की सक्रिय भागीदारी के साथ लिए जाते थे। इस बदलाव को सबसे अच्छी तरह एक महिला, चंचला देवी, के शब्दों में समझा जा सकता है। उन्होंने एक ग्राम सभा में खड़े होकर कहा, "पहले हम यहां सिर्फ बैठने आते थे, अब हम अपनी बात रखते हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि वह योजना में शामिल हो।" यह वाक्य केवल एक भावना नहीं, बल्कि पूरे परिवर्तन की कहानी बयां करता है। आज बच्छई पंचायत की ग्राम सभा एक जीवंत और सशक्त मंच बन चुकी है, जहां महिलाएं न केवल अपनी उपस्थिति दर्ज कराती हैं, बल्कि विकास की दिशा भी तय करती हैं। यह कहानी हमें यह सिखाती है कि जब सही मार्गदर्शन, निरंतर प्रयास और समुदाय का सहयोग मिलता है, तो सबसे बड़ी सामाजिक चुप्पी भी आवाज़ में बदल सकती है।

PRAKRITIK KHETI
BEEJAMRUT
cow dung
urine
microbial culture
JEEVAMRUT
setive bubbles
GHAN JEEVAMRUT
MULCHING
WAPHASA
Jeevamrut Preparation

प्राकृतिक खेती की राह पर बढ़ते किसान

सीकर जिले की लक्ष्मणगढ़ तहसील के ढाका की ढाढ़ी गांव में रहने वाले किसान राजेंद्र प्रसाद ढाका की यह कहानी केवल खेती की नहीं, बल्कि संघर्ष, विश्वास और बदलाव की कहानी है। कुछ साल पहले तक राजेंद्र प्रसाद रासायनिक खेती करते थे। शुरुआत में उनकी फसल का उत्पादन अच्छा था, जिससे उनकी आमदनी भी ठीक-ठाक हो जाती थी। लेकिन धीरे-धीरे जमीन की उर्वरता कम होने लगी जिससे उत्पादन घटने लगा और लागत लगातार बढ़ती चली गई। इस आर्थिक दबाव का उनके स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ा। उन्हें अनिद्रा और मानसिक तनाव जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ा। इन सभी परिस्थितियों के कारण वे काफी चिंतित रहने लगे।

पवन खीचड़
बजाज फाउंडेशन
सीकर, राजस्थान

इसी बीच उनके जीवन में एक नया मोड़ आया। एक दिन उन्हें बजाज फाउंडेशन द्वारा आयोजित प्राकृतिक खेती प्रशिक्षण कार्यक्रम की जानकारी मिली, तो उन्होंने इसमें शामिल होने का निर्णय किया। इस प्रशिक्षण में उन्हें बीजामृत, जीवामृत, घन जीवामृत, मल्चिंग,वाफसा आदि प्राकृतिक खेती से जुड़ी विधियों के बारे में विस्तार से बताया गया। ऊनें यह यह भी सिखाया गया कि इनका निर्माण कैसे किया जाता है और खेत में इनका सही उपयोग कैसे करें। इस प्रशिक्षण के बाद राजेंद्र प्रसाद ने संस्था के साथ संपर्क बनाए रखा और अपने खेत में इन तकनीकों को व्यावहारिक रूप से अपनाना शुरू किया। शुरुआत आसान नहीं थी,पहले साल उत्पादन में कमी आई और उनके सामने आर्थिक चुनौती खड़ी हो गई। तब लोग उनका मजाक भी उड़ाने लगे कि "ये तो पागल हो गया।" इसके अलावा कीट प्रबंधन, बाजार की अनिश्चितता और परिवार की चिंता जैसी कई समस्याएं सामने आईं।

लेकिन राजेंद्र जी ने हार नहीं मानी वे लगातार प्रयास करते रहे, संस्था से मार्गदर्शन लेते रहे और अपने अनुभव से सीखते गए। लगभग 2–3 साल के निरंतर प्रयास के बाद प्राकृतिक खेती के परिणाम दिखने लगे। उनकी जमीन की उर्वरता में सुधार हुआ तो उत्पादन धीरे-धीरे बढ़ने लगा और खेती की लागत काफी कम हो गई। अब उन्हें पहले की तरह रासायनिक खाद और कीटनाशकों पर खर्च नहीं करना पड़ता था। प्राकृतिक खेती से निकली फसल पौष्टिक और स्वादिष्ट होने से उनके स्वास्थ्य में भी सुधार आया। अनिद्रा की समस्या धीरे-धीरे कम होने लगी और मानसिक तनाव भी घट गया। वे पहले से अधिक आत्मविश्वासी और स्वस्थ महसूस करने लगे। जब गांव के लोगों को यह बदलाव दिखाई दिया, तो वही लोग जो पहले उनका मजाक उड़ाते थे, अब उनसे पूछने लगे कि प्राकृतिक खेती कैसे की जाती है। उनके उत्पादों की गुणवत्ता बेहतर होने के कारण बाजार में उन्हें अच्छी कीमत मिलने लगी और उनकी बचत भी दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी।

आज राजेंद्र प्रसाद जी न केवल एक सफल प्राकृतिक किसान हैं, बल्कि आसपास के किसानों के लिए प्रेरणा स्रोत भी बन चुके हैं। वे बजाज फाउंडेशन के साथ मिलकर किसानों को निरंतर प्रशिक्षण दे रहे हैं। उनका प्रयास है कि ज्यादा से ज्यादा किसान प्राकृतिक खेती अपनाएं और स्वस्थ जीवन जी सकें। वे कहते हैं कि प्राकृतिक खेती न केवल जमीन को, बल्कि जीवन को भी स्वस्थ बनाती है।

जहां संवाद जीवित रहता है,
वहीं परिवर्तन संभव होता है।

लैंगिक समानता की मिसाल बनी अनीता

जयपुर जिले में कार्यरत विकासोन्मुख संस्थान ने वर्ष 2023 में महिलाओं को ड्राइविंग सिखाने की मुहिम शुरू की, इससे जुड़कर अनीता ने खुद ड्राइविंग सीखकर अपना ट्रैक्टर चलाना शुरू किया बल्कि चैनपुरा पंचायत के 60 महिलाओं को भी इस मुहिम से जोड़ा। खेती किसानी का काम करते हुए ट्रैक्टर वाली अनीता आज लैंगिक समानता की एक मिसाल बन चुकी हैं।

डॉ. राजेश मालाकार
विकासोन्मुख संस्थान नरेना
जयपुर, राजस्थान

अनीता सावरदा गांव की रहने वाली है, जो जयपुर जिले के मौजमाबाद तहसील में आता है। यह क्षेत्र कृषि में विशेष पहचान रखता है। यहां की मिट्टी फसलों के लिए वरदान है। यहां मूंगफली, सरसों, गेहूं और चना की पैदावार अच्छी होती है। अनीता का परिवार साधारण है। इनकी शिक्षा की बात करें तो यह केवल साक्षर है। इनको केवल नाम लिखना ही आता है। परिवार में सास-ससुर, 2 लड़कियां और 1 लड़का है। इनका पति महिलाओं का सम्मान करने वाला और सुलझे विचारों वाला व्यक्ति है। अनीता का हर कदम पर सहयोग करता है। इनका परिवार खेती और पशुपालन का कार्य करता है। बचपन से अनीता में प्रतिभा तो थी, मगर उसे दिखाने का अवसर नहीं मिला।

वर्ष 2023 में विकासोन्मुख संस्थान की टीम इनके गांव आयी और महिलाओं को ट्रैक्टर चलाने और रिपेयरिंग सिखाने की बात बताई। यह सुनकर अनीता बहुत खुश हुई कि अब उसका सपना पूरा हो सकेगा। परिवार ने ट्रेनिंग लेने की सहमति दी, मगर दिक्कत अभी खत्म नहीं हुई। परिवार ने सोचा कि अकेली महिला को कैसे पुरुषों के बीच ट्रेनिंग लेने भेजें। पति ने अपने माता-पिता को समझाया कि गांव की अन्य महिलाएं भी इस ट्रेनिंग में भाग ले रही हैं। संस्था टीम ने गांव में बैठक की और सबको इस ट्रेनिंग के फायदे बताए, और समझाया कि अपनी बहू-बेटियों को घर से निकलने का अवसर दें। आज महिलाएं भी पुरुषों के समान सब काम कर सकती हैं, उन्हें बस एक मौका देने की जरूरत है और वह मौका विकासोन्मुख संस्थान लाए हैं।

इस ट्रेनिंग से महिलाओं का खेत में लगने वाला श्रम कम होगा और महिला ड्राइवर तैयार होंगी, जिससे परिवार को आर्थिक और सामाजिक सहयोग मिलेगा। लोगों को यह बात समझ में आई। संस्था टीम के अच्छे व्यवहार और कुशल नेतृत्व से ट्रेनिंग सफल रही। आज यह ट्रेनिंग अनीता के जीवन में बड़ा बदलाव लेकर आई। गांव में इनकी पहचान बनी और अपनी पहचान के रूप में लाइसेंस मिला। आज यह अपने खेत और अन्य किसानों के खेतों में ट्रैक्टर से जुताई-बुवाई में सहयोग कर रही है। ट्रैक्टर से महिला मजदूरों को फसल कटाई के लिए ले जाती है, जिससे परिवार के पुरुष सदस्यों को रोजगार के अन्य अवसर मिले हैं। परिवार की आमदनी में वृद्धि हुई। आज अनीता खेतों में बीज चयन से लेकर मंडी तक के कामों में परिवार का सहयोग कर रही है।

संस्थान के साथ मिलकर अनीता अब महिलाओं की मीटिंग भी लेने लगी है। गांव की 30 महिलाओं को ट्रेनिंग लेने के बाद घर-घर जाकर मशीनीकरण की जानकारी दी है। वे भी आज अनीता के जैसे बनने को अग्रसर हैं। संस्थान ने इनको मास्टर ट्रेनर बनाया है। चैनपुरा पंचायत में इन्होंने ट्रेनर बनकर 60 महिलाओं को ट्रेनिंग दी। आज अनीता की पहल से सावरदा गांव में लैंगिक समानता का माहौल बना है। इनके प्रयास से 3 समान रुचि समूह (CIG) बने हैं, जो गांव के कॉमन मुद्दे जैसे स्वास्थ्य, प्राकृतिक खेती, स्वच्छता पर काम कर रहे हैं। संस्थान का मानना है कि महिलाएं समाज का आईना हैं। अगर यह धुंधला पड़ता है तो समाज की तस्वीर साफ नहीं दिखती। अतः महिलाओं को आगे बढ़ने का अवसर देना चाहिए, जिससे एक बराबरी वाला और आदर्श समाज बन सके।

‘माटी’ को मुस्कराना सिखाया

राजस्थान के जयपुर से लगभग 90 किलोमीटर दूर स्थित त्योदा गांव में रहने वाले सीताराम सैनी ने एक ऐसा काम किया है, जिसने बंजर होती मिट्टी में फिर से जीवन का संचार कर दिया। अगर यह कहा जाए कि उन्होंने माटी को मुस्कराना सिखाया, तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी।

त्योदा गांव जयपुर, कुचामन और नागौर जिलों की सीमा पर स्थित है। कभी यह इलाका मीठे बाजरे, खरबूजे और तरबूज की खेती के लिए जाना जाता था, लेकिन वर्षों तक रासायनिक खाद और कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग ने खेतों की उर्वरता छीन ली। खेत बंजर होने लगे, रेत के टीले बढ़ने लगे और खेजड़ी जैसे महत्वपूर्ण वृक्ष भी धीरे-धीरे गायब होने लगे।

सीताराम ने बचपन में अपने पिता के साथ खेती करते हुए वह दौर देखा था, जब बिना रासायनिक खाद के भी अच्छी पैदावार होती थी। लेकिन जब खेती की जिम्मेदारी उनके हाथ में आई, तब तक मिट्टी लगभग अपनी उत्पादक क्षमता खो चुकी थी। इसी दौरान परिवार में एक दुखद घटना हुई। उनकी भाभी का कैंसर से निधन हो गया। बीमारी के कारणों को समझने की कोशिश में उन्हें महसूस हुआ कि रासायनिक खेती का बढ़ता उपयोग केवल मिट्टी ही नहीं, बल्कि लोगों के स्वास्थ्य के लिए भी गंभीर खतरा बनता जा रहा है। यही वह क्षण था, जब उन्होंने प्राकृतिक खेती अपनाने का संकल्प लिया।

वर्ष 2020 में उन्होंने प्राकृतिक खेती की शुरुआत की। शुरुआती दो वर्षों तक उत्पादन बहुत कम हुआ, लेकिन उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। इसी दौरान उनका संपर्क विकासोन्मुख संस्थान के डॉ. राजेश मालाकार से हुआ। प्रशिक्षण, मार्गदर्शन और विभिन्न संस्थाओं से मिली सीख ने उनके आत्मविश्वास को मजबूत किया। धीरे-धीरे उन्होंने अपने खेत को प्राकृतिक खेती के अनुरूप तैयार किया।

आज उनके खेत में देशी बाजरा, लाल गेहूं, बंशी गेहूं और कई प्रकार के देशी बीज संरक्षित हैं। मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए वे ढैंचा जैसी हरी खाद, देशी गाय का गोबर और गोमूत्र, सरसों की खली तथा केंचुआ खाद का उपयोग करते हैं। इन प्रयासों से मिट्टी में कार्बन बढ़ा है और उसकी उर्वरता फिर से लौटने लगी है। उनके खेत को देखने आसपास के किसान नियमित रूप से आते हैं और कहते हैं कि सीताराम ने खेत में फिर से जान डाल दी है।

सीताराम केवल अपने खेत तक सीमित नहीं रहे। वे अब तक 55 किसानों को निःशुल्क गौ-कृपा अमृत उपलब्ध करा चुके हैं और उन्हें प्राकृतिक खेती अपनाने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। वर्तमान में वे बंशी गेहूं और देशी तुरई जैसी फसलों का सफल उत्पादन कर रहे हैं।

सीताराम का मानना है कि प्राकृतिक खेती केवल खेती की तकनीक नहीं, बल्कि प्रकृति और जीवन के बीच संतुलन स्थापित करने का माध्यम है। उनका संदेश है—"सभी जीवों को जीने दें और सभी किसान मिलकर खेती को फिर से उसका प्राकृतिक स्वरूप लौटाएं। उनकी यह यात्रा बताती है कि यदि किसान धैर्य, सीखने की इच्छा और प्रकृति पर विश्वास बनाए रखें, तो बंजर होती माटी भी फिर से मुस्कराने लगती है।

Anemia-mukt

कंचन की हरी उम्मीद

जयपुर जिले के किशनगढ़ रेनवाल की एक साधारण महिला कंचन ने अपनी बीमारी और कमजोरी को अपनी ताकत बना लिया। एक बीमारी के कठिन अनुभव ने उसे न सिर्फ खुद बदलने के लिए प्रेरित किया, बल्कि पूरे समुदाय में एनीमिया को खत्म करने के लिए पोषण बाग आंदोलन चलाने का रास्ता दिखाया। कंचन ने 155 परिवार में पोषण बाग तैयार कराने में भूमिका निभायी है जिससे महिलाओं और किशोरियों का स्वास्थ्य बेहतर हो रहा है।

डॉ. नरेंद्र कुमार गर्वा
अलखा फाउंडेशन किशनगढ़
रेनवाल जिला जयपुर राजस्थान

जयपुर जिले के छोटे से शहर किशनगढ़ रेनवाल की एक ऊबड़-खाबड़ बस्ती में रहने वाली कंचन की जिंदगी कभी बहुत साधारण और संघर्षों से भरी थी। 33 वर्षीय कंचन दो बच्चों की माँ है-8 साल का राहुल और 5 साल की प्रिया। आज दोनों बच्चे स्वस्थ और खुशहाल दिखते हैं, लेकिन कंचन के मन में एक दर्दनाक याद हमेशा ताजा रहती है। जुलाई 2021 में जब प्रिया का जन्म हुआ था, तब कंचन की हालत बेहद गंभीर थी। डॉक्टरों ने साफ शब्दों में कहा था कि उसके शरीर में खून की भारी कमी है और तुरंत खून चढ़ाना पड़ेगा। अस्पताल के उस पलंग पर लेटी कंचन के मन में एक ही सवाल बार-बार उठ रहा था-अगर उसने पहले अपने खान-पान और पोषण पर ध्यान दिया होता, तो क्या आज यह दिन देखना पड़ता?

उस एक घटना ने कंचन के भीतर गहरा बदलाव ला दिया। उसने ठान लिया कि अब वह सिर्फ खुद के लिए नहीं, बल्कि अपनी बस्ती की हर महिला के लिए कुछ करेगी, ताकि कोई और महिला उस पीड़ा से न गुजरे जिससे वह गुजरी थी। जनवरी 2023 में कंचन की जिंदगी को नई दिशा मिली, जब वह अलखा फाउंडेशन के साथ जुड़ी और "अलखा सखी" के रूप में काम करने लगी। अब उसका हर दिन एक मिशन बन गया था। सुबह बच्चों को स्कूल भेजने के बाद वह अपने छोटे-से थैले में आयरन की गोलियां, पोषण चार्ट और बीज लेकर निकल पड़ती। धीरे-धीरे बस्ती की महिलाएं उसे पहचानने लगीं और सम्मान से "अलखा सखी" कहकर बुलाने लगीं।

22 अगस्त 2023 की एक शाम, मंदिर के सामने कंचन ने बस्ती की महिलाओं की एक बैठक बुलाई। करीब चालीस महिलाएं वहां इकट्ठा हुईं। कंचन जब खड़ी हुई तो उसकी आवाज़ में अब झिझक नहीं, बल्कि आत्मविश्वास और दृढ़ता साफ झलक रही थी। उसने महिलाओं को समझाया कि गलत खान-पान और पोषण की कमी ही उनकी कमजोरी

की सबसे बड़ी वजह है। उसने अपने अनुभव साझा करते हुए बताया कि कैसे वह खुद एनीमिया से जूझती रही, लेकिन अब अपने घर में लगाए गए जैविक पोषण बाग की वजह से उसका हीमोग्लोबिन 12 तक पहुंच गया है।

कंचन ने महिलाओं को एक सरल लेकिन प्रभावी समाधान सुझाया-हर घर में "पोषण बाग" लगाना। उसने बताया कि थोड़ी-सी जगह में भी पालक, मेथी, सरसों, चुकंदर, मूली, अमरूद, अनार और करी पत्ता जैसी पौष्टिक चीजें उगाई जा सकती हैं। उसने यह भी जोर

दिया कि यह सब जैविक तरीके से उगाया जाएगा-गोबर की खाद और नीम की खली के साथ, बिना किसी केमिकल के। शुरुआत में कुछ महिलाएं हिचकिचाईं। किसी ने जगह की कमी बताई, तो किसी ने परिवार के समर्थन को लेकर चिंता जताई। लेकिन कंचन ने हार नहीं मानी। उसने हर घर जाकर खुद गड्ढे खोदे, खाद तैयार की और बीज बोए। उसने महिलाओं के परिवार वालों को भी समझाया कि एक स्वस्थ माँ ही स्वस्थ बच्चे को जन्म दे सकती है। अलखा फाउंडेशन ने भी इस पहल में सहयोग किया, बीज, टोकरियां और पोषण से जुड़ी जानकारी उपलब्ध कराई। धीरे-धीरे यह छोटा-सा प्रयास एक बड़े बदलाव में बदलने लगा।

करीब छह महीने बाद बस्ती का दृश्य पूरी तरह बदल चुका था। जहां पहले सूनी जमीन थी, वहां अब हर घर के आंगन में हरे-भरे छोटे-छोटे बाग दिखाई देने लगे। महिलाएं सुबह मिलकर ताजी सब्जियां तोड़तीं, बच्चों के लिए पौष्टिक भोजन बनातीं और अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखने लगीं। गर्भवती महिलाओं को कंचन खुद आयरन की गोलियां देती और उन्हें नियमित सेवन के लिए प्रेरित करती। एक दिन उसकी छोटी बेटी प्रिया ने मासूमियत से पूछा कि वह अब इतनी तेज़ क्यों दौड़ती है। कंचन ने उसे गोद में उठाकर मुस्कुराते हुए कहा कि अब उसके खून में ताकत है-और यही ताकत वह पूरे गांव में बांट रही है। आज कंचन का यह प्रयास एक आंदोलन का रूप ले चुका है। उसने अपनी बस्ती और आसपास की कॉलोनियों में लगभग 155 जैविक पोषण बाग स्थापित कर दिए हैं। उसका सपना है कि किशनगढ़ रेनवाल को एनीमिया मुक्त क्षेत्र बनाया जाए।

हर सुबह जब सूरज की पहली किरणें हरे पत्तों पर पड़ती हैं, कंचन अपने बच्चों के साथ अपने पोषण बाग में खड़ी होकर उस सफर को याद करती है, जिसने उसे कमजोर से मजबूत बनाया। अब उसका एक ही संकल्प है-जो दर्द उसने झेला, वह किसी और महिला को न झेलना पड़े। कंचन की यह कहानी सिर्फ एक महिला के बदलाव की नहीं, बल्कि उस उम्मीद की है जो हर घर में हरियाली और हर दिल में सेहत की रोशनी जगा सकती है।

रवि का सैलून
रवि का सैलून

रवि के चेहरे पर आत्मविश्वास की चमक

यह कहानी है एक ऐसे युवा की जो गरीबी और बेरोजगारी के बीच ना उम्मीद हो चुका था। तभी उसे "आशा किरण सेवा संस्थान" द्वारा चलाये जा रहे सैलून प्रशिक्षण से जुड़ने का मौका मिला। इस कौशल विकास प्रशिक्षण से उसने सेविंग और कटिंग का हुनर सीखा और अपना सैलून खोलकर स्वरोजगार की राह पर बढ़ चला है। यह कहानी बताती है कि यदि युवाओं को सही कौशल और बुनियादी सुविधाएं मिल जाए तो बेरोजगारी की समस्या को खत्म किया जा सकता है।

विजय कुमार महतो
आशा किरण सेवा संस्थान,
बोकारो, झारखंड

कुंडा गांव में रहने वाला रवि अपनी परिस्थितियों से अक्सर टूट जाता था। उसका जीवन गरीबी, अधूरी शिक्षा और रोजगार के अभाव से घिरा हुआ था। हर दिन उसके लिए एक जैसी निराशा लेकर आता था। गांव में सीमित संसाधन और अवसरों की कमी के कारण उसे लगता था कि उसकी जिंदगी यूं ही संघर्षों में बीत जाएगी और वह कभी कुछ बड़ा नहीं कर पाएगा। इन्हीं हालातों के बीच एक दिन गांव में आशा की एक नई किरण आई। "आशा किरण सेवा संस्थान" द्वारा तीन महीने का सैलून प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किया गया। यह कार्यक्रम गांव के युवाओं को स्वरोजगार के लिए तैयार करने के उद्देश्य से चलाया जा रहा था। इसमें हेयर कटिंग, शेविंग, फेस केयर और ग्राहकों से व्यवहार जैसे जरूरी कौशल सिखाए जाते थे।

रवि के मन में एक हल्की-सी उम्मीद जगी, लेकिन साथ ही डर भी था-क्या वह यह सब सीख पाएगा? क्या वह कुछ बदल पाएगा? काफी सोच-विचार के बाद उसने हिम्मत जुटाई और इस प्रशिक्षण में अपना नामांकन करा लिया। शुरुआत के दिन उसके लिए आसान नहीं थे। उसे कई बार लगा कि वह यह सब नहीं कर पाएगा, लेकिन प्रशिक्षकों का मार्गदर्शन और उसके अंदर कुछ कर गुजरने की इच्छा उसे आगे बढ़ने की ताकत देती रही।

धीरे-धीरे रवि ने हर छोटी-बड़ी चीज़ सीखनी शुरू की। उसने बाल काटने की तकनीक, साफ-सफाई का महत्व, ग्राहकों से व्यवहार और काम के प्रति अनुशासन को समझा। तीन महीनों का यह प्रशिक्षण केवल कौशल सीखने तक सीमित नहीं रहा, बल्कि इसने उसकी सोच को भी बदल दिया। अब वह खुद को असहाय नहीं, बल्कि सक्षम महसूस करने लगा था। प्रशिक्षण पूरा होने के बाद रवि ने एक बड़ा कदम उठाया। उसने अपने ही गांव में एक छोटा-सा सैलून शुरू किया। शुरुआत में ग्राहक कम थे, लेकिन उसकी मेहनत और ईमानदारी ने धीरे-धीरे लोगों का विश्वास जीत लिया। गांव के लोग उसके काम से संतुष्ट होने लगे और उसका छोटा-सा सैलून चल निकला।

अब रवि की आमदनी बढ़ने लगी थी। वह अपने परिवार की आर्थिक मदद करने लगा और घर की जिम्मेदारियों को निभाने में सक्षम हो गया। सबसे बड़ी बात यह थी कि अब उसके चेहरे पर निराशा की जगह आत्मविश्वास नजर आने लगा था। समय के साथ रवि की पहचान केवल एक सैलून चलाने वाले युवक के रूप में नहीं, बल्कि एक प्रेरणा के रूप में बनने लगी। गोमिया क्षेत्र के कई युवा उसकी कहानी से प्रभावित हुए। उन्होंने देखा कि अगर रवि जैसे हालात में रहने वाला व्यक्ति अपनी मेहनत से आगे बढ़ सकता है, तो वे भी अपने जीवन में बदलाव ला सकते हैं।

रवि की सफलता ने अन्य युवाओं को भी "आशा किरण सेवा संस्थान" के प्रशिक्षण कार्यक्रम से जुड़ने के लिए प्रेरित किया। अब कई युवा नए कौशल सीखकर अपने पैरों पर खड़े होने लगे हैं। रवि की यह कहानी हमें सिखाती है कि बदलाव की शुरुआत एक छोटे-से फैसले से होती है। जब इंसान हिम्मत करता है और अवसर को अपनाता है, तो वही अवसर उसकी जिंदगी की दिशा बदल देता है। आज रवि न केवल आत्मनिर्भर है, बल्कि वह उन युवाओं के लिए एक मिसाल बन चुका है, जो कभी अपने हालात से हार मानने लगते हैं।

कहानी कहने का साहस जगाइए,

समाज बदलने की शक्ति बढ़ाइए।

ग्रामीण विकास शोध
एवं तकनीकी केंद्र
(GVSTK)
जैविक
जैविक
जैविक
जैविक

भूरा की मेहनत रंग लाई

टोंक जिले के एक छोटे किसान भूरा बागरिया का परिवार अर्थिक तंगी से जूझ रहा था। ऐसे में उनको साथ मिला ग्रामीण विकास शोध एवं तकनीकी केंद्र (GVSTK) का। इससे जुड़कर उन्होने जैविक खेती को अपनाया। इस साल जब फसल तैयार हुई और बाजार में बेची गई, तो भूरा बागरिया को लगभग 40,000 रुपये का लाभ हुआ। यह उनके लिए एक बड़ी उपलब्धि थी। पहली बार उन्हें अपनी खेती से इतना अच्छा मुनाफा मिला था। इस सफलता ने उनके जीवन में नई उम्मीद और आत्मविश्वास भर दिया।

दिनेश पुरी
ग्रामीण विकास शोध एवं
तकनीकी केंद्र
टोंक, राजस्थान

टोंक जिले के मालपुरा ब्लॉक के गांव बरोल की बागरिया की ढाणी में रहने वाले भूरा बागरिया एक बेहद साधारण और वंचित परिवार से आते हैं। उनके पास केवल 1 बीघा जमीन है, जो उनके परिवार की आजीविका का मुख्य साधन थी। वर्षों से वे पारंपरिक तरीके से खेती करते आ रहे थे और फसल उत्पादन बढ़ाने के लिए रासायनिक खाद और कीटनाशकों का इस्तेमाल भी करते थे। शुरुआत में उन्हें लगा कि इससे उत्पादन बेहतर होगा, लेकिन धीरे-धीरे इसका उल्टा असर दिखने लगा। सही मार्गदर्शन और नई तकनीक अपनाकर भूरा ने न सिर्फ अपनी खेती को बचाया, बल्कि अपनी जिंदगी को भी नई दिशा दी। यह कहानी बताती है कि बदलाव की शुरुआत एक छोटे फैसले से होती है, जो बड़े परिणाम ला सकती है।

पिछले तीन वर्षों से उनकी फसलें लगातार खराब हो रही थीं। मिट्टी की उर्वरता कम होती जा रही थी और लागत बढ़ती जा रही थी। हर सीजन के बाद उन्हें घाटा ही उठाना पड़ता था। आर्थिक तंगी ने उनके परिवार की स्थिति को और कमजोर कर दिया था। इस लगातार नुकसान ने भूरा बागरिया को मानसिक रूप से भी काफी परेशान कर दिया था। उन्हें लगने लगा था कि शायद खेती अब उनके बस की बात नहीं रही।

इसी निराशा के बीच जून 2026 में एक नया मोड़ आया। GVSTK की टीम ने उनकी ढाणी में हेमलेट लेवल कमेटी (HLC) की एक बैठक आयोजित की। इस बैठक में गांव के लोग अपनी समस्याएं साझा कर रहे थे। भूरा बागरिया ने भी हिम्मत जुटाकर अपनी खेती की परेशानी सबके सामने रखी। उन्होंने बताया कि कैसे लगातार नुकसान के कारण वे टूट चुके हैं और समझ नहीं पा रहे कि आगे क्या करें। (GVSTK) की टीम ने उनकी बात को गंभीरता से सुना और उन्हें भरोसा दिलाया कि यदि वे कुछ बदलाव करने के लिए तैयार हैं, तो स्थिति को सुधारा जा सकता है। टीम ने उन्हें जैविक खेती अपनाने की सलाह दी। शुरुआत में

यह उनके लिए एक नया और थोड़ा कठिन विचार था, लेकिन लगातार हो रहे नुकसान ने उन्हें कुछ नया अपनाने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने इस सुझाव को स्वीकार किया और एक नई शुरुआत करने का निर्णय लिया।

इसके बाद GVSTK की टीम ने उन्हें विभिन्न जैविक तकनीकों का प्रशिक्षण दिया। उन्हें बीजोपचार, सप्तधान्य प्रयोग और फॉर्मर फील्ड स्कूल (FFS) के माध्यम से खेती के नए तरीके सिखाए गए। केवल प्रशिक्षण ही नहीं, बल्कि टीम के सदस्य समय-समय पर उनके खेत पर जाकर उन्हें मार्गदर्शन भी देते रहे। इस सहयोग ने भूरा बागरिया

के आत्मविश्वास को धीरे-धीरे बढ़ाया। उन्होंने अपनी 1 बीघा जमीन पर इस बार मटर की खेती जैविक विधियों से की। उन्होंने रासायनिक खाद और दवाइयों की जगह प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया। शुरुआत में उन्हें थोड़ी चिंता थी कि परिणाम क्या होंगे, लेकिन इस बार उनकी मेहनत रंग लाई। उनकी फसल पहले से कहीं बेहतर हुई। जब फसल तैयार हुई और बाजार में बेची गई, तो भूरा बागरिया को लगभग 40,000 रुपये का लाभ हुआ। यह उनके लिए एक बड़ी उपलब्धि थी। पहली बार उन्हें अपनी खेती से इतना अच्छा मुनाफा मिला था। इस सफलता ने उनके जीवन में नई उम्मीद और आत्मविश्वास भर दिया।

आज भूरा बागरिया केवल एक किसान नहीं, बल्कि अपने क्षेत्र के अन्य किसानों के लिए प्रेरणा बन चुके हैं। जो व्यक्ति कभी अपनी असफलताओं से निराश था, वही अब दूसरों को नई राह दिखा रहा है। वे अब अपने अनुभव साझा करते हैं और अन्य किसानों को भी जैविक खेती अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। भूरा बागरिया की यह कहानी इस बात का प्रमाण है कि सही दिशा, सामुदायिक सहयोग और सीखने की इच्छा से किसी भी किसान की जिंदगी बदली जा सकती है। यह कहानी हमें यह भी सिखाती है कि कठिनाइयां चाहे जितनी भी बड़ी क्यों न हों, अगर हम बदलाव को अपनाने का साहस रखते हैं, तो सफलता का रास्ता जरूर खुलता है।

GIRL
CHAMPION
ROYAL ENFIELD

लड़कियों की अनुपम पहचान

यह कहानी है लखनऊ में लड़कियों की स्वतन्त्रता के लिए आवाज उठाने वाली एक ऐसी युवती की, जिसने परिवार की संकुचित सोच और परंपराओं के बीच अपनी आवाज़ को दबने नहीं दिया। आज वह एक सक्रिय "गर्ल चैंपियन" है, जहां वह लड़कियों के हक में राइट टू चॉइस के अधिकार को लेकर जागरूकता अभियान चला रही है।

मीनाक्षी पाल
सीएसईआई
नई दिल्ली

लखनऊ में रहने वाली अनुपम एक साधारण परिवार से आने वाली लड़की है, लेकिन उसके सपने और सोच बिल्कुल अलग हैं। बचपन से ही उसने घर की जिम्मेदारियों को समझा और निभाया, क्योंकि वह अपने परिवार की सबसे बड़ी बेटी थी। इन जिम्मेदारियों के बीच भी उसने कभी अपने सपनों को पीछे नहीं छोड़ा। उसे समाज के लिए काम करना, लोगों की मदद करना और अपनी बाइक चलाते हुए खुली हवा में आज़ादी महसूस करना बेहद पसंद था। उसके लिए ये सब सिर्फ शौक नहीं, बल्कि उसकी पहचान का हिस्सा थे।

समय के साथ जब उसकी उम्र शादी के लायक मानी जाने लगी, तो उसके माता-पिता ने उसके लिए रिश्ता देखना शुरू किया। अनुपम अभी पूरी तरह तैयार नहीं थी, लेकिन परिवार की भावनाओं का सम्मान करते हुए उसने लड़के से मिलने के लिए हामी भर दी। कुछ मुलाकातों में दोनों के बीच बातचीत हुई, विचार साझा हुए और सब कुछ सामान्य और सहज लगा। परिवार को रिश्ता पसंद आया और जल्द ही सगाई भी हो गई। उस समय सब कुछ एक नई शुरुआत जैसा लग रहा था-उम्मीदों और खुशियों से भरा हुआ।

लेकिन जैसे-जैसे समय बीता, सगाई के बाद लड़के के व्यवहार में बदलाव आने लगा। वह पहले की तरह खुलकर बात नहीं करता था और उसकी बातों में धीरे-धीरे सख्ती झलकने लगी। एक दिन उसने साफ शब्दों में अनुपम के सामने शर्त रख दी कि शादी के बाद उसे अपनी सामाजिक क्षेत्र की नौकरी छोड़नी होगी और बाइक चलाना भी बंद करना होगा। साथ ही उसे केवल घर और परिवार की जिम्मेदारियों पर ध्यान देना होगा। यह सुनकर अनुपम के भीतर कई सवाल उठने लगे। क्या दूसरों की मदद करना गलत है? क्या अपनी पसंद और अपने तरीके से जीना गलत है? क्या शादी का मतलब अपनी पहचान और सपनों को छोड़ देना होता है? उस पल अनुपम के सामने एक कठिन निर्णय था-चुप रहकर समझौता करना या अपनी बात खुलकर रखना।

उसने दूसरा रास्ता चुना। उसने फोन काट दिया और तुरंत अपने माता-पिता से बात कर पूरी स्थिति साफ-साफ बता दी। उसके माता-पिता का जवाब उसके लिए सबसे बड़ी ताकत बन गया। उन्होंने बिना किसी दबाव के कहा, “बेटा, ये तुम्हारी जिंदगी है। तुम्हें जो सही लगे, वही करो। हम तुम्हारे साथ हैं।” यह सुनकर अनुपम को अपने अंदर एक नई शक्ति का एहसास हुआ। उसने बिना देर किए अपना निर्णय लिया। उसने अपने मंगेतर को स्पष्ट शब्दों में मना कर दिया कि वह अपनी आज़ादी, अपने काम और अपने सपनों से समझौता नहीं करेगी। उसके लिए शादी से ज्यादा जरूरी उसकी पहचान और उसका आत्मसम्मान था।

यह फैसला लेना आसान नहीं था, खासकर उस माहौल में जहां लड़कियों से अक्सर समझौता करने की उम्मीद की जाती है। लेकिन अनुपम ने यह हिम्मत दिखाई, क्योंकि उसने अपने अधिकारों को समझा था। वह CSEI के GLLP प्रोग्राम की एक सक्रिय “गर्ल चैंपियन” रही है, जहां उसने न सिर्फ नेतृत्व करना सीखा, बल्कि अपनी आवाज़ की ताकत को भी पहचाना। इसी सफर ने उसे यह समझाया कि “राइट टू चॉइस” केवल एक विचार नहीं, बल्कि उसका अधिकार है। आज अनुपम की कहानी केवल उसकी व्यक्तिगत जीत नहीं है, बल्कि उन सभी लड़कियों के लिए एक संदेश है, जो अपने सपनों और पहचान के लिए संघर्ष कर रही हैं। उसने यह साबित कर दिया कि अपनी जिंदगी के फैसले खुद लेने का साहस ही असली आज़ादी है। यह कहानी हमें सिखाती है कि जब हम अपने अधिकारों को समझते हैं और उनके लिए खड़े होते हैं, तब हम न सिर्फ अपनी जिंदगी बदलते हैं, बल्कि समाज में भी एक नई सोच की शुरुआत करते हैं।

कहानी से समझ बनती है,
समझ से साझी कार्रवाई।

कुंडी शाह महाराज
महिला समूह
मंजरी फाउंडेशन - एपीपीआई

लडवारी की महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण

बुंदेलखंड अंचल के गांवों में जहां जनजीवन कर्ज के जाल में फंसा हुआ है वहीं लडवारी गांव की महिलाएं मंजरी फाउंडेशन से जुड़कर स्वरोजगार और आत्मनिर्भरता की ओर कदम बढ़ा रही हैं। टीकमगढ़ जिले के लडवारी और आसपास के गांव में 273 स्वयं सहायता समूह कार्यरत हैं। इनसे जुड़ी 2,500 महिलाओं ने 23 लाख रुपये से अधिक की सामूहिक बचत की है और 46 लाख रुपये का ऋण प्रवाह सुनिश्चित किया है।

शबनम
मंजरी फाउंडेशन
धौलपुर, राजस्थान

बुंदेलखंड के उस धूसर और उदास अंचल में बसा लडवारी गांव, जहां की हवाओं में निर्धनता की महक और अभावों की धूल उड़ा करती थी। भौगोलिक रूप से मध्य प्रदेश के टीकमगढ़ जिले का यह हिस्सा अपनी कठोर ग्रेनाइट चट्टानों, पथरीली लाल मिट्टी और अत्यधिक ढाल वाली भूमि के लिए जाना जाता है। यहां की जमीन की जलधारण क्षमता इतनी कम है कि वर्षा का जल रुकने के बजाय बह जाता है, जिससे खेती करना यहां के किसानों के लिए एक निरंतर और थका देने वाला संघर्ष रहा है। यहां की जमीन जितनी सख्त है, यहां की पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना उससे भी कहीं अधिक गहरी और जड़ रही है।

गांव का भूगोल दो हिस्सों में बंटा था-एक ओर लडवारी खास की लगभग 872 प्राणों की धड़कनें थीं, तो दूसरी ओर लडवारी ताल के किनारे बसे 56 लोगों का छोटा सा संसार। किंतु इन दोनों ही आंकड़ों के भीतर एक मौन व्यथा छिपी थी। जनगणना की सूखी फाइलों में दर्ज 806-900 का वह संकुचित लिंगानुपात, साथ ही महिला साक्षरता (मात्र 32-40%) राज्य के औसत से काफी नीचे होना केवल एक संख्या मात्र नहीं था, बल्कि उस समाज का क्रूर दर्पण था जिसने सदियों से बेटियों के अस्तित्व को संशय की दृष्टि से देखा था। पुरुषों के वर्चस्व वाले इस समाज में महिलाओं की भूमिका केवल चूल्हे-चौके और खेतों में बेगार मजदूरी तक सीमित थी।

इसी गांव की एक संकरी गली के आखिरी छोर पर पान बाई का छोटा सा घर था। पचास बसंत देख चुकी पान बाई के मुख पर झुर्रियों की वे रेखाएं अंकित थीं, जो केवल उम्र ने नहीं, बल्कि बुंदेलखंड की 45°C तक तपती धूप और जीवन की निष्ठुर चोटों ने उकेरी थीं। जब उनकी सात वर्षीय मासूम बेटी एक भीषण दुर्घटना का शिकार हुई, तो उनके सामने दो पहाड़ थे-एक आर्थिक तंगी और दूसरा समाज का वह संकुचित नजरिया जो महिला को 'निर्णय लेने वाला' नहीं मानता था। गांव की सहानुभूति तो मिली, पर किसी ने घाव पर मरहम रखने के लिए आर्थिक हाथ आगे नहीं बढ़ाया।

विवश होकर उन्हें गांव के उस कठोर हृदय साहूकार की चौखट पर माथा टेकना पड़ा। वह कर्ज नहीं था, मानो एक अदृश्य बेड़ी थी जो उनके आत्म-सम्मान को हर दिन कसती जा रही थी। 3% से 5% प्रति माह की दर वाला वह सूद इतना ऊंचा था कि रात की नींद और दिन का चैन, दोनों ही उस साहूकार के बहिखाते में गिरवी रख दिए गए थे। किंतु नियति के क्रूर खेल के बीच वर्ष 2021 के उन धुंधले दिनों में एक मूक क्रांति का उदय हुआ, जब 'मंजरी फाउंडेशन' की एपीपीआई (APPI) परियोजना ने गांव की औरतों को एक सूत्र में पिरोना शुरू किया। शुरुआत में जब पान बाई ने 'कुंडी शाह महाराज महिला समूह' की चौखट लांघी, तो गांव के पुरुषों और बुजुर्गों ने इसे शक और उपहास की निगाह से देखा। लडवारी की गलियों में कानाफूसी होने लगी कि "अब औरतें घर चलाएं गी?" या "पैसे का हिसाब-किताब क्या ये अनपढ़ औरतें संभालेंगी?" पितृसत्तात्मक समाज के इस मूक प्रतिरोध के बावजूद पान बाई डटी रहीं।

पान बाई की इस व्यक्तिगत जिद के पीछे असल में मंजरी फाउंडेशन की वह व्यापक सोच थी, जो आज राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और हरियाणा के लगभग 900 से अधिक गांवों में 90,000 से अधिक महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों और किसान फेडरेशन के माध्यम से संगठित कर रही है। 'महिला केंद्रित उद्यमिता विकास कार्यक्रम' से पान बाई जैसी अनगिनत महिलाओं को साहूकारों के चंगुल से मुक्त कराकर बैंकिंग प्रणाली से जोड़ने और 'कटोरी' व 'झुलकी' जैसे ब्रांड्स के जरिए उनके उत्पादों को वैश्विक पहचान दिलाने में संगठन ने जो आधार तैयार किया, उसी ने पान बाई को खड़े होने का हौसला दिया।

इसी क्रम में समूह के माध्यम से पान बाई को 50,000 रुपये का ऋण मिला, जो केवल कागज के टुकड़े नहीं, बल्कि एक सूक्ष्म-उद्यमी (Micro-entrepreneur) के रूप में उनके नए जन्म का प्रमाण थे। उन्होंने पूरी तन्मयता से मुर्गी पालन का कार्य आरंभ किया। छोटे-छोटे चूजों की चहक में उन्हें अपनी बेटी के भविष्य की किलकारी सुनाई देने लगी। यह केवल एक महिला की सफलता नहीं थी, बल्कि मंजरी फाउंडेशन द्वारा जलवायु संरक्षण, सौर ऊर्जा के विस्तार और 'सेकंड चांस एजुकेशन' जैसे नवाचारों से लिखी जा रही उस आत्मनिर्भर ग्रामीण भारत की एक जीवंत गाथा थी, जो सिद्ध करती है कि जब नेतृत्व महिलाओं के हाथ में होता है, तो पूरा समाज प्रगति करता है।

धीरे-धीरे, अपनी अथक मेहनत और समूह की सखियों के संबल से उन्होंने न केवल साहूकार का ऋण चुकाया, बल्कि पशुपालन और खेती के लिए ट्रैक्टर जैसे संसाधनों में भी अपनी हिस्सेदारी सुनिश्चित की। पान बाई की यह व्यक्तिगत विजय वास्तव में एक विशाल सामाजिक परिवर्तन का हिस्सा थी।

आज लडवारी और आसपास की स्त्रियां 273 स्वयं सहायता समूहों का नेतृत्व कर रही हैं, जिनमें 2,500 से अधिक सदस्य शामिल हैं। इन महिलाओं ने मिलकर 23 लाख रुपये से अधिक की सामूहिक बचत की है और 46 लाख रुपये का ऋण प्रवाह सुनिश्चित किया है। शासन, वित्तीय प्रबंधन और नेतृत्व के प्रशिक्षण ने उन्हें गांव के बड़े निर्णयों में बोलने का साहस दिया। अब जब पान बाई या उनके समूह की कोई महिला बैंक जाती है या बाजार में सौदेबाजी करती है, तो गांव के लोग उन्हें 'बेबस' नहीं, बल्कि 'सक्षम कारोबारी' के रूप में देखते हैं। उनकी वित्तीय समझ ने गांव की उन रूढ़िवादी दीवारों को ढहा दिया है जो स्त्रियों को घर की चारदीवारी तक सीमित रखती थीं।

यह क्रांति केवल तिजोरियों तक सीमित नहीं रही; लडवारी की प्यासी धरती ने भी अपना रंग बदला। टीकमगढ़ की अर्ध-शुष्क जलवायु की भौगोलिक विषमताओं को चुनौती देते हुए परियोजना के तहत 10 खेत तालाबों और चेक डैम्स का निर्माण हुआ, जिससे जल स्तर में सुधार हुआ और 300 एकड़ बंजर भूमि पर सिंचाई की हरियाली छा गई। खेती की पैदावार में 40% की वृद्धि हुई और पशुपालन, विशेषकर बकरी पालन में 29% का सुधार देखा गया। घर के पिछवाड़े बनी 'पोषण वाटिकाओं' ने बच्चों और महिलाओं की थाली में सेहत के रंग भर दिए। जब कोविड-19 की महामारी ने दुनिया को थाम दिया, तब भी ये महिला संगठन नहीं डिगे। उन्होंने राशन वितरण और स्वास्थ्य जागरूकता के जरिए न केवल अपनों को बचाया, बल्कि समुदाय के बंधनों को और गहरा किया।

आज पान बाई उस धूल भरी गली की साधारण स्त्री मात्र नहीं हैं; वह उस महासंघ का गौरव हैं जहां सैकड़ों स्त्रियां अपनी नियति खुद लिख रही हैं। उनकी बेटी ने 12वीं की परीक्षा उत्तीर्ण की और उसका विवाह बिना किसी अपमानजनक कर्ज के संपन्न हुआ। पान बाई ने सिद्ध कर दिया कि जब एक महिला का 'अभिमान' उसकी 'आत्मशक्ति' और 'वित्तीय निर्णय' में बदलता है, तो वह पूरे समाज का अंधकार सोखने की क्षमता रखती है।

पान बाई के शब्दों में, "मंजरी फाउंडेशन की एपीपीआई (APPI) परियोजना ने पान बाई को ना सिर्फ एक नायिका की भांति खुद को सिद्ध करने में मदद की बल्कि यह भी सिखाया कि स्त्री का 'अभिमान' जब 'आत्मशक्ति' में बदलता है, तो वह पूरे समाज का अंधकार सोखने की क्षमता रखती है।" यह कहानी केवल एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि उस विरासत की है जो जल संरक्षण और सूक्ष्म-उद्यमिता के मेल से एक नए ग्रामीण भारत का निर्माण कर रही है।

गेंदा फूल
की फ़सल

मनभरी से 'धनभरी' बनने की कहानी

राजस्थान में अलवर जिले के थानागाज़ी ब्लॉक में बसे किशोरी गांव की धूल भरी गलियों में, दृढ़ता की एक कहानी सामने आई। एक साधारण परिवार की किसान मनभरी देवी एक दोराहे पर खड़ी थीं।

"मैं क्या करूं जिससे मेरे बच्चों की पढ़ाई और घर का खर्च चल सके, लेकिन यह मेरे लिए एक सिरदर्द बन गया क्योंकि मेहनत और मजदूरी करने से खर्च नहीं चल पा रहा था।" उनकी आंखों में आंसू और बच्चों की चिंता उन्हें अंदर ही अंदर खा रही थी।

नरेंद्र चौधरी
(इब्तिदा)
अलवर, राजस्थान

लेकिन क्या करें... एक दशक से भी ज़्यादा समय से, वह और उनके पांच सदस्यों का परिवार अपनी 2.2 एकड़ ज़मीन पर गेहूं और सरसों जैसी पारंपरिक फ़सलें उगाते रहे, और एक छोटा सा हिस्सा सब्ज़ियों के लिए भी। लेकिन मुनाफ़ा बहुत कम था, पत्ती मरोड़ और झुलसा जैसे रोगों ने उनकी मिर्च और भिंडी की फ़सलों को तबाह कर दिया, खरपतवारों ने उनके खेतों को जकड़ लिया, और ऊंची लागत के कारण उन्हें बहुत कम मुनाफ़ा हुआ।

ख़र्चों का बोझ मनभरी और उनके पति पर भारी पड़ रहा था, जिससे उनके बच्चों की शिक्षा का ख़र्च उठाना या परिवार की बुनियादी ज़रूरतें पूरी करना लगभग असंभव हो गया था। उनके मन में शंकाएं छाई हुई थीं, और भविष्य में ज़िंदगी जीना आसान नहीं लग रहा था।

2023 में एक भाग्यशाली दिन, मनभरी देवी की मुलाकात अपने गांव की आजीविका सखी उगंती देवी से हुई। बातचीत के दौरान उनकी आंखों से आंसू निकल रहे थे और वे घबराई हुई थीं। फिर उन्हें शांत करते हुए उगंती ने इब्तिदा द्वारा चलाए जा रहे महिला आजीविका संवर्धन कार्यक्रम के बारे में भावुकता से बताया।

उन्होंने मनभरी को अगस्त 2023 में आजीविका पाठशाला में आमंत्रित किया। सत्र में, उन्हें आधुनिक कृषि तकनीकों से परिचित कराया गया और बताया गया कि कैसे तकनीक कृषि को बदल सकती है। मनभरी उन खेतों का दौरा करके मंत्रमुग्ध हो गईं जहां किसान गेंदे के साथ अन्य फसल मिर्च उगा रहे थे—एक ऐसी विधि जिससे कीटों को प्राकृतिक रूप से कम किया जा सकता है। उन्होंने इस अभिनव दृष्टिकोण के बारे में और जानने की उत्सुकता में अनगिनत प्रश्न पूछे। प्रेरित होकर, उन्होंने विश्वास की एक छलांग लगाने का फैसला किया।

2024 में, मनभरी ने अपनी एक एकड़ ज़मीन गेंदे की खेती के लिए समर्पित कर दी—एक ऐसी फसल जो उन्होंने पहले कभी नहीं उगाई थी। इब्तिदा के मार्गदर्शन में, उन्होंने कम लागत वाली तकनीकों को अपनाया और बीज, उर्वरक, कीट नियंत्रण और मजदूरी पर ₹53,600 खर्च किए। उनकी मेहनत रंग लाई—उन्होंने गेंदे के फूल बेचकर ₹5,40,231 कमाए। इतना बड़ा मुनाफ़ा कि पूरा गांव दंग रह गया। किशोरी गांव में पहली बार गेंदे के फूल व्यावसायिक फसल के रूप में खिले, और मनभरी की सफलता आशा की किरण बन गई।

उनकी इस उपलब्धि ने न केवल इब्तिदा के प्रभाव को उजागर किया, बल्कि अगले सीज़न में 10 अन्य किसानों को भी फूलों की खेती करने के लिए प्रेरित किया। धीरे-धीरे, लेकिन निश्चित रूप से, गांव ने उच्च उपज वाली खेती के तरीकों

को अपनाना शुरू कर दिया।

मनभरी की महत्वाकांक्षा यहीं नहीं रुकी। थानागाज़ी ब्लॉक में, इब्तिदा ने स्ट्रॉबेरी की एक नई फसल शुरू की, जो अलवर की शुष्क भूमि में बहुत कम उगती है। इब्तिदा के लिए, इस क्षेत्र में स्ट्रॉबेरी की खेती एक बड़ी चुनौती थी, लेकिन मनभरी ने इसे पूरे उत्साह से अपनाया।

इब्तिदा की टीम के सहयोग से, उन्होंने अक्टूबर 2024 में अपने 0.62 एकड़ जमीन के 625 वर्ग मीटर में 2,000 स्ट्रॉबेरी के पौधे लगाए और इन नाजुक पौधों की देखभाल के लिए ड्रिप मल्चिंग और लो-टनल तकनीकों का इस्तेमाल किया। उन्होंने 625 वर्ग मीटर में ब्रोकली और शेष 1,250 वर्ग मीटर में टमाटर भी लगाए। इसकी कुल लागत ₹37,680 थी।

गांव वाले संशय में थे। कुछ ने उनका मज़ाक उड़ाते हुए कहा, "लागे छ आपणा गांव मायने पैसा बर्बाद करण रो सोक लगो छे।" लेकिन मनभरी ने इन तानों को नज़रअंदाज़ करते हुए, अटूट लगन से अपने खेतों की देखभाल की। इब्तिदा के कर्मचारी और आजीविका सखियां नियमित रूप से आती रहीं और समय पर सिंचाई और देखभाल सुनिश्चित करती रहीं। उनकी कड़ी मेहनत रंग लाई।

मनभरी ने स्ट्रॉबेरी से ₹1,45,860, ब्रोकली से ₹18,546 और टमाटर से ₹40,059 कमाए, जिससे उनकी कुल आय ₹2,04,465 हो गई। ₹37,680 के अपने खर्चों को घटाने के बाद, उन्होंने मात्र 0.62 एकड़ से ₹1,66,785 का मुनाफ़ा कमाया—इतने छोटे से क्षेत्र के लिए एक उल्लेखनीय उपलब्धि।

मनभरी की इस सफलता और स्ट्रॉबेरी फसल को देखने के लिए थानागाजी तहसीलदार श्री मनीष पांचोली, कृषि अधिकारी श्रीमती संतरा

मीणा, ग्राम सेवक हनुमान सिंह एवं युवा जागृति संस्था के C.E.O. गोकुल चन्द सैनी आए। पहले तो उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ था कि थानागाजी जैसे क्षेत्र में स्ट्रॉबेरी फसल लग सकती है।

किन्तु प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता क्या—देखकर सभी दंग रह गए और मनभरी की खूब प्रशंसा की। इसके बाद तो मानो देखने वालों का तांता लग गया और राजस्थान पत्रिका, दैनिक भास्कर जैसे अखबारों में खबरें छपने लगीं।

मनभरी की सफलता ने न केवल उनकी जेबें भरीं, बल्कि उनकी ज़िंदगी भी बदल दी। अपनी कमाई से, उन्होंने अपने परिवार के लिए एक मज़बूत पक्का घर बनाया। उनके बच्चे गर्व से झूम उठे और उनके पति, जो पहले हिचकिचा रहे थे, अब अगले साल अपनी पूरी एक एकड़ ज़मीन स्ट्रॉबेरी की खेती के लिए समर्पित करने की योजना बना रहे हैं।

गांव के लोग, जो कभी उन पर हंसते थे, अब उनकी प्रशंसा करते हैं और उनके नक्शेकदम पर चलने के लिए प्रेरित होते हैं। मनभरी

के खेत इस बात का प्रतीक बन गए हैं कि दृढ़ संकल्प और सही सहयोग से क्या हासिल किया जा सकता है।

उनकी कहानी ने थानागाज़ी को रोशन कर दिया और इब्तिदा का नाम बदलाव के उत्प्रेरक के रूप में सुर्खियों में आ गया। मनभरी, जो कभी गुज़ारा करने के लिए संघर्ष कर रही थीं, अब "धनभरी" बन गई हैं—यह साबित करते हुए कि कड़ी मेहनत और नवाचार से सबसे कठिन चुनौतियों को भी अवसरों में बदला जा सकता है।

इब्तिदा संस्था में ऐसी अनेक कहानियां कदम-कदम पर बिखरी हुई हैं। इब्तिदा एक सामुदायिक विकास संगठन है, जो राजस्थान के अलवर सहित तीन राज्यों के 638 गांवों में 83,300 से अधिक परिवारों के साथ कार्य करते हुए शिक्षा, आजीविका, बालिका सशक्तिकरण, पर्यावरण एवं जल संरक्षण तथा अधिकार-आधारित पहलों के माध्यम से वंचित समुदायों के जीवन में सकारात्मक बदलाव ला रहा है। संगठन समुदाय की भागीदारी को केंद्र में रखते हुए महिलाओं, किशोरियों और युवाओं को सशक्त बनाता है, ताकि वे आत्मनिर्भर बनकर अपने परिवार और समाज के विकास में सक्रिय भूमिका निभा सकें।

आय:

- गेंदा (2024): ₹5,40,231 (लागत: ₹53,600)
- स्ट्रॉबेरी, ब्रोकली, टमाटर (0.62 एकड़): कुल ₹2,04,465
- (स्ट्रॉबेरी से ₹1,45,860, ब्रोकली से ₹18,546, टमाटर से ₹40,059; लागत: ₹37,680)
- शुद्ध लाभ (0.62 एकड़): ₹1,66,785

पत्रिका

फसल उत्पादन | स्ट्रॉबेरी की खेती होती है केवल पांच महीने, उत्पादक किसानों को अच्छे मुनाफे की उम्मीद

खेती में नवाचार : 11 किसानों ने लगाए स्ट्रॉबेरी के 22 हजार पौधे

नकदी फसलों की ओर बढ़ा किसानों का रुझान, पानी की भी बचत

एक किसान ने लगाए दो हजार पौधे

किसानों का कहना है

प्रभाव:

- एक पक्का घर बनाया, अन्य किसानों को प्रेरित किया और क्षेत्र में इब्तिदा की प्रतिष्ठा बढ़ाई
- गेंदे की फसल से प्रभावित होकर थानागाजी में 25 अन्य किसानों ने इसे अपनाया
- इब्तिदा की पहल से अलवर जिले के 6 ब्लॉक्स में 46 किसानों ने स्ट्रॉबेरी की खेती शुरू की
- सरकारी अधिकारियों की विजिट के बाद कृषि विभाग द्वारा इसे आगे बढ़ाने की योजना बनी
- थानागाजी सहित पूरे अलवर जिले में लगभग 1237 किसानों ने फूलों की खेती शुरू की
- इब्तिदा की नई शुरुआत अब देखने को मिलने लगी है...

जो दिखता नहीं, उसे सामने लाना है,
समुदाय की कहानियों को आवाज बनाना है।

आदिवासी बाल स्वराज-सच्चे बचपन की प्रहरी

राजस्थान के बांसवाड़ा जिले के पीपलखूट क्षेत्र के जेथलिया गांव में अप्रैल का महीना आदिवासी किसान परिवारों के लिए खेती, महुआ संग्रहण और सामुदायिक गतिविधियों का समय होता है। फसल कटाई, आजीविका की चुनौतियों और बढ़ती गर्मी के बीच पूरा परिवार अपने दैनिक कार्यों में व्यस्त रहता है। इसी दौरान शादी-विवाह का मौसम भी पूरे उत्साह के साथ जीवंत हो उठता है। ढोल-मांदल की थाप, रंग-बिरंगे पारंपरिक परिधान, सामूहिक नृत्य और लोकगीत गांवों को उत्सवमय बना देते हैं।

मधु सिंह
वाग्धारा
जयपुर राजस्थान

हालांकि, इस उत्सवी माहौल के बीच बाल विवाह जैसी परंपराएं भी सक्रिय हो जाती हैं। सामाजिक मान्यताओं और प्रचलित रीतियों के कारण कई आदिवासी बालिकाओं का भविष्य उनके वयस्क होने से पहले ही तय कर दिया जाता है।

परंपराओं से टकराने का साहस

इसी सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश में पली-बढ़ी 52 वर्षीय आदिवासी महिला किसान मणि देवी ने कक्षा 10 तक शिक्षा प्राप्त की है और इन उत्सवों की गर्म जोशी के पीछे की सामाजिक कुरीति को बचपन से देखा और जिया है। लड़कियों का कम उम्र में विवाह, पढ़ाई का बीच में छूट जाना और छोटी उम्र में ही घरेलू एवं पारिवारिक जिम्मेदारियों का बोझ उठाने की अनेकों लड़कियों की नियति बनते मणि देवी ने करीब से देखा है और इसी नियति को मणि देवी ने भी अपने जीवन में झेला है। मणि देवी इस बात को भलीभांति समझती रही हैं कि बाल विवाह जैसी कुप्रथा एक ऐसी सामाजिक वास्तविकता है जिसे अधिकांश लड़कियां और महिलाएं अपनी इच्छा के विरुद्ध भी स्वीकार करने को मजबूर होती थीं। लेकिन इसके खिलाफ वे आगे आकर कभी बोल नही पाईं। साहस था लेकिन आवाज़ उठाने के अवसर नही दिखाई दे रहे थे।

कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन से जुड़ाव

वर्ष 2020 में कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठनके सदस्य के रूप में चुनी गयी मणि देवी, संगठन के अन्य सदस्यों के साथ नियमित रूप से बैठकों में जुड़ने लगी। बैठक उनके लिए एक ऐसा मंच साबित हुआ जहां पर उन्हें अपने अधिकारों, सामाजिक मुद्दों पर समझ के विकास के अवसर प्राप्त होने लगे और यहां पर उन्होंने देखा कि अन्य गांवों की महिलायें भी कितने साहस भरे क़दम उठा रही हैं। यहीं से उनके भीतर की आवाज़ को बल मिला और धीरे धीरे एक कुशल वक्ता, सहज नेतृत्वकर्ता और साहस के रूप में मणि देवी में निर्णय लेने की क्षमता कदम दर कदम दिखाई देने लगी उन्होंने अपने गांव मे छुआछूत और बाल विवाह जैसी सामाजिक बुराइयों के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाना शुरू किया।

समुदाय के लोगों और उनके अपने रिश्तेदारों को उनके द्वारा उठाये जाने वाले कदम अजीब लगने लगे। लेकिन मणि देवी ने ठान लिया था कि अब वे चुप नहीं रहेंगी। और आंगनवाडी कार्यकर्ता के रूप में गांव की महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य की देखरेख करना भी शुरू किया।

अपने आस पास के आदिवासी गांवों की स्थितियों से परिचित मणी देवी ने अपने गांव के साथ साथ कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन के अन्य गांवों में भी बाल विवाह को रोकना, बालिकाओं को शिक्षा से जोड़ना आदि सभी कामों में शिद्दत के साथ जोड़ने लगीं। समुदाय के लोगों को मणि देवी में अचानक बदलाव दिखाई देने लगे इन सबसे अनजान मणि देवी रुढ़िवादी परम्पराओं को बदलने का संकल्प ले चुकी थीं।

पहला हस्तक्षेप: जब रुकी 13 वर्षीय बालिका की शादी

कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन की नियमित सदस्य बनने के बाद उन्हें अपने गांव में बाल विवाह का एक नया मामला मिला-इस बार लडकी की आयु 13 वर्ष थी। जब शादी की तैयारी चल ही रही थी, तभी मणि देवी सीधे लड़की के परिवार के पास पहुंच गईं। उन्होंने परिवार के सदस्यों को विस्तारपूर्वक बाल विवाह निषेध कानून के बारे में बताया और बाल विवाह से सेहत और समाज पर पड़ने वाले असर के बारे में खुलकर बात की। शुरू में तो परिवार और गांव के बड़े-बुज़ुर्ग नाराज़ हुए, लेकिन पंचायत के सहयोग से उन्होंने चाइल्डलाइन को इस मामले की जानकारी दी, जिसने सही समय पर दखल देकर शादी रुकवा दी। यह उनके गांव के लिए एक अहम मोड़ साबित हुआ। उनका हौसला और मज़बूत हुआ।

विरोध के बीच लगातार संघर्ष

अब मणि देवी के सामने बाल विवाह की घटनाओं को अधिक से अधिक रोकने की जिद थी जब उन्हें बाल विवाह होने की जानकारी मिली मणि देवी फिर से वाग्धारा संस्था के प्रतिनिधि के साथ वहां पहुंच गयी और आगे बढ़कर दखल दिया। परिवार वाले बात सुनने को तैयार नहीं थे। हार न मानते हुए, मणि देवी ने और वाग्धारा प्रतिनिधि ने उन्हें ऐसी शादियों के कानूनी नतीजे, भावनात्मक नुकसान समझाये। और यह भी बताया कि ऐसे में जुर्माने के रूप में बड़ी रकम और जेल की सजा हो सकती है क्योंकि बाल विवाह एक बड़ा अपराध है। समुदाय के कुछ लोगों ने उनके खिलाफ कड़ा रुख अपनाया, लेकिन वह शांत और अपनी बात पर अडिग रहीं। वाग्धारा के सहयोग से, वह लगातार लोगों से जुड़ती रहीं, उन्हें प्रेरित करती रहीं और सही रास्ता दिखाती रहीं। आखिरकार,

शिक्षा के लिए संघर्ष

मणि देवी का काम सिर्फ़ दखल देने तक ही सीमित नहीं रहा। शिक्षा और कम उम्र में शादी के बीच के संबंध को समझते हुए, उन्होंने आस-पास के गांवों में जाना शुरू किया, खासकर उन घरों में जहां माता-पिता के काम के सिलसिले में बाहर चले जाने की वजह से लड़कियां स्कूल छोड़ चुकी थीं। वह घर-घर गईं और परिवारों से गुज़ारिश की: "अपने बच्चों को पढ़ने दें। आप अपने गांव में रहकर भी अपनी आजीविका चला सकते हैं। वे हमेशा कहतती हैं कि "अगर लड़कियां पढ़ेंगी, तो न सिर्फ़ उनका भविष्य बेहतर होगा, बल्कि उन्हें नौकरी भी मिल सकती है और वे पूरे गांव, पंचायत और परिवार का नाम रोशन कर सकती हैं।"

यह मानते हुए कि शिक्षा ही असली आज़ादी है, मणि देवी ने स्थानीय आंगनवाड़ियों और स्कूलों के साथ मिलकर बालिका शिक्षा को बढ़ावा दिया। जब उन्होंने यह पहल शुरू की, तो उन्हें अपने ही लोगों के विरोध का सामना करना पड़ा। कई माता-पिता कहते थे, "लड़कियों को पढ़ा-लिखाकर क्या होगा? अगर हम उनकी जल्दी शादी कर दें, तो वे घर-गृहस्थी संभाल लेंगी।" लेकिन ग्राम स्तर पर गठित ग्राम स्वराज समूह, सक्षम समूह की बैठकों के ज़रिए, मणि देवी ने शिक्षा के महत्व पर ज़ोर दिया और माता-पिता को अपनी बेटियों को स्कूल भेजने के लिए प्रोत्साहित किया।

इन मिली-जुली कोशिशों के बाद उन्होंने बहुत बड़ी संख्या में बाल विवाह रुकवाए । यह मणि देवी का आत्मविश्वास ही था कि धीरे-धीरे गांव के लोगों पर प्रभाव दिखाई देने लगा। उनकी पहल ने गांव में यह संदेश स्थापित किया कि बाल विवाह केवल सामाजिक बुराई ही नहीं, बल्कि कानूनन अपराध भी है।

आर्थिक तंगी से जूझ रहे परिवारों के लिए, उन्होंने सरकारी योजनाओं की जानकारी जुटाई और फ़ॉर्म भरने में मदद की। उन्होंने स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की सूची तैयार की और उन्हें वापस स्कूल भेजकर दाखिला कराने में भी अहम भूमिका निभाई। आख़िरकार, पंचायत में स्कूल से जुड़े मुद्दों को उठाकर, मणि देवी ने यह सुनिश्चित किया कि शिक्षक भी नियमित रूप से कक्षा में आएं। उनकी कोशिशों ने ज़ोर पकड़ना शुरू कर दिया। कई परिवारों ने अपनी बेटियों का स्कूल में दोबारा दाखिला कराया। मणि देवी की लगातार मदद और मार्गदर्शन से न सिर्फ़ लड़कियों की पढ़ाई फिर से शुरू हुई, बल्कि कई परिवारों ने काम के लिए दूसरी जगहों पर जाना भी बंद कर दिया। आज, लड़कियों के माता-पिता गर्व से कहते हैं, "मणि देवी की वजह से हमारी बेटियां फिर से पढ़ाई कर रही हैं।"

स्वास्थ्य और पोषण की दिशा में कदम

वाग्धारा के सहयोग से, मणि देवी ने आंगनवाड़ी वर्कर के तौर पर अपनी भूमिका का इस्तेमाल करते हुए जेथालिया में महिलाओं और बच्चों की सेहत को प्राथमिकता दी। उन्होंने गर्भवती महिलाओं और नवजात शिशुओं के लिए समय पर स्वास्थ्य सेवाएं सुनिश्चित कीं, गांव में टीकाकरण और पोषण जांच कैंप लगवाए, और पोषण वाले बगीचों के ज़रिए पौष्टिक भोजन के स्थानीय स्रोत तैयार किए जिनमें देसी पौधे उगाए जाते थे। बच्चों को साफ़ और पौष्टिक भोजन मिले, यह पक्का करने के लिए उन्होंने खुद रसोईघर की देखरेख की। इसके साथ ही उन्होंने गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं के लिए जागरूकता के खास सत्र भी शुरू किए।

इन सबकी सोच के आधार में वाग्धारा की स्वराज की संकल्पना

पिछले दो दशकों से वाग्धारा संस्था राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजरात के आदिवासी अंचल में एक हज़ार से अधिक गांवों के किसान परिवारों के साथ मिलकर काम कर रही है। इसके अंतर्गत 28 कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन बनाए गए हैं, जो सच्ची खेती, सच्चा बचपन और सच्चा स्वराज की संकल्पना को साकार करने मेंअपना योगदान दे रहे हैं। मणि देवी इसी स्वराज की जीती-जागती मिसाल हैं-एक ऐसी मिसाल, जो बाकी 27 संगठनों के गांवों के लिए भी प्रेरणा का स्रोत बन रही है।

मणि देवी की विरासत के रूप में देखा जा सकता है कि जिस समाज ने उन्हें चुप रहना सिखाया था, उसी समाज में उन्होंने अपनी आवाज़ से बदलाव की नींव रखी। बाल विवाह रोकने से लेकर लड़कियों को स्कूल तक पहुंचाने और माताओं को स्वास्थ्य सेवाएं दिलाने तक-हर कदम पर वे अकेले लड़ीं, गिरीं और फिर उठकर आगे बढ़ीं।

नीर और नारी: कैलाशी बनी मिसाल

(कबिरा कुआं एक है, पानी भरे अनेक, बर्तन में ही भेद है, पानी सब में एक)

यह दास्तान राजस्थान टोंक जिले के मालपुरा ब्लॉक के छोटे से गांव कचौलिया की है जो खारे पानी की झील से महज 10 किमीटर की दूरी पर स्थित है। जमीन में पानी भी नहीं है, पीने का पानी दूर से लाना पड़ता है। गांव कचौलिया को इस समस्या से बचाने के लिए जल जीवन मिशन जैसी योजना लागू तो कर दी लेकिन जल वितरण की व्यवस्था ठीक से बन नहीं पा रही थी, ऐसे में गांव में जल स्वास्थ्य एवं स्वच्छता समिति का गठन किया गया। इस समिति से जुड़ी महिला सदस्य कैलाशी देवी की मेहनत से आज घर-घर में पीने का शुद्ध पानी नल जल योजना के माध्यम से पहुंच रहा है।

हेमराज डीडवानिया
ग्राम विकास नवयुवक मण्डल
लापोड़िया, राजस्थान

कैलाशी देवी सामाजिक कार्यकर्ता है यह अन्य पिछड़ा वर्ग से आती हैं। इनके परिवार में कुल छः सदस्य है इनके पति गाडी ड्राइवर का कार्य करते हैं। कैलाशी ने पिछले 15 सालो से समाज के छोटे-छोटे सामाजिक बदलाव करने में ग्राम स्तर पर अपनी अहम भूमिका अदा की है। इन्होंने सबसे पहले शुरुवात ग्राम विकास नवयुवक मण्डल लापोडिया संस्थान के साथ अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र में रात्रि में ग्वाल-बालों को पढ़ाने का कार्य किया, जिसमें स्कूल से वंचित ग्वाल-बालों को अनौपचारिक केन्द्र में शिक्षा देकर उनके जीवन को नई दिशा देने का कार्य किया। जिसमें से कुछ ग्वाल बाल शिक्षा की मुख्य धारा से जुड़कर आगे की शिक्षा ग्रहण की, और आज कई ग्वाल बाल उच्च शिक्षा ग्रहण कर सरकार के विभिन्न पदो पर कार्य कर रहे हैं, उसके बाद वर्ष 2008 में कैलाशी का महिला एवं बाल विकास विभाग में आशा सहयोगिनी के पद पर चयन हो गया। इन्होंने इस पद पर रहते हुये अपनी ईमानदारी से कार्य किया इस कार्य को देखते हुये बाद में अपनी ही ग्राम पंचायत कचौलिया वर्ष 2017 में ग्राम पंचायत सहायक के रूप में चयन हो गया वर्तमान में पंचायत सहायक पद पर कार्य कर रही हैं। तत्पश्चात इन्होंने पंचायत में रहकर ग्राम विकास के कार्य में सक्रियता निभाते हुये इन्होंने गरीब असहाय लोगो को सरकारी योजना का लाभ दिलवाया, वर्ष 2021 में सरकार की पेयजल को लेकर जल जीवन मिशन योजना आई। जल जीवन मिशन योजना में ग्राम जल स्वास्थ्य एवं स्वच्छता समिति की महिला सदस्य भी बनी, इनकी शुरूआत से ही समाज सेवा करने की रूचि थी, जल जीवन मिशन की शुरुआत होने पर कैलाशी ने अपने गाव को 100 प्रतिशत नल से जल लगवाने हेतु हर घर मोहल्ले में जाकर लोगो व महिलाओं को जागरूक किया। पुरुषों ने इनका कम सहयोग किया फिर भी इन्होंने हिम्मत नहीं हारी इन्होंने सोचा कि पानी का काम महिलाओं से जुड़ा हुआ है। इन्होंने ठाना कि क्यों न महिलाओं को जागरूक किया जाये। इन्होंने अपने घर व पंचायत के काम से निवृत्त

होकर शाम को मोहल्ले में जाकर महिलाओं को पानी की योजना घर-घर नल के फायदे बताये। कमेटी की हर माह होने वाली मिटिंग में सक्रिय रूप से भाग लेती रही, एक समय ऐसा आया कि जब तक गांव के द्वारा 10 प्रतिशत जनसहयोग कमेटी के खाते में जमा नहीं होगा, तब जक गांव में नल कनेक्शन नहीं होगें, एक नई मुसीबत आ गई। कमेटी के सदस्यों ने अपने स्तर पर प्रयास किया तो उनको विफलता हाथ लगी, कमेटी ने वापिस सभी सदस्यों की मिटिंग रखी, मिटिंग में जनसहयोग राशि के बारे में चर्चा हुई कि इसको कैसे इकटठा करे किसी भी सदस्य ने इस कार्य के लिए हीं नहीं भरी।

जब कोई निर्णय नहीं हुआ तो कैलाशी ने जन सहयोग राशि इकटठा करने की जिम्मेदारी ले ली कि मैं महिलाओं को समझाकर इस राशि इकटठा कर कमेटी के खाते में जमा करवा करवाउगी फिर कैलाशी ने हर घर जाकर महिलाओं को समझाकर हर घर से 3000 रूपये के हिसाब से 150 घरों का जनसहयोग 4,65,000/- रूपये इकटठा कर कमेटी के खाते में जमा करवा दिया, इसके बाद कमेटी ने इनको सम्मानित किया, कैलाशी के इस प्रयास से आज पूरे गांव में सभी घरो में नल से शुद्ध पेयजल घरो मे समय पर पहुंच रहा है।

बोझ सिर पर भारी था, वर्षों से नारियों का ये कष्ट जारी था।

जब से हर घर जल अभियान है आया, महिलाओं को राहत बीमारियों को दूर भगाया।

बालू के टीले
वर्षा जल संचयन
वर्षा जल संचयन

हाय रे पानी रे पानी

राजस्थान के नागौर और सीकर जिले के बीच बसे एक छोटे से गांव में जहां रेत, धूप और प्यास हर दिन की सच्चाई थी वही रहती थी शारदा और उसका सारा परिवार | गांव चरण का बॉस जो नेछवा ब्लॉक के निकट स्थित है, जहा दूर-दूर तक सिर्फ रेत ही रेत दिखाई देती थी जहा की सबसे बड़ी समस्या थी पानी | यह गांव रेतीले मैदानों और ऊंचे-नीचे बालू के टीलों से घिरा हुआ है।

रवि घोष
बजाज फाउण्डेशन
सीकर, राजस्थान

इस गांव में पानी की हर बूंद अनमोल है। तपती धूप और सूखी धरती वाले इस क्षेत्र में दूर-दूर तक छोटी-छोटी 'ढाणियां' बसी हुई हैं, जहां लगभग 20-50 लोग और उनके पालतू पशु रहते हैं। इन्ही ढाणि में शारदा का छोटा-सा कच्चा घर था। परिवार में उसके पति लक्ष्मण, दो बच्चे और बूढ़ी सास थीं। हर सुबह सूरज निकलने से पहले ही शारदा अपने सिर पर खाली मटके रखकर कई किलोमीटर दूर पंचायत के सामूहिक टंकी से पानी लेने निकल जाती थी। तपते रेत पर उनके पैर जलते लेकिन प्यास उन्हें चलने पर मजबूर करती। धीरे-धीरे हालात और ख़राब होते गए, मवेशी कमजोर हो गए।

एक दिन गर्मी के कारण शारदा बहुत थकी हुई और अस्वस्थ महसूस कर रही थी, लेकिन घर में पानी की एक बूंद भी नहीं थी। शारदा की आंखों में आंसू भर आए। उसने अपने सूखे होंठों पर जीभ फेरी और खाली घड़े उठाकर चल पड़ी। उस दिन गर्मी इतनी ज्यादा थी कि आसमान से आग बरस रही थी। रास्ते में कई बार उसे चक्कर आया, मगर परिवार वालो का चेहरा याद आते ही वह फिर उठ खड़ी होती।

उसने कभी हार नहीं मानी और हर दिन बस एक ही उम्मीद थामे बिताया कि एक दिन, सब कुछ ठीक हो जाएगा। ठीक इन सबके बीच उसकी मुराद पूरी होने ही वाली थी मानो स्वयं ईश्वर ने ही शारदा की पुकार सुन ली हो।

उसी समय गांव में एक संस्था आई, जिसने लोगों की परेशानी देखी। संस्था ने वर्षा जल संचयन टैंक बनवाने का काम शुरू किया। शुरुआत में परिवार वालों को भरोसा नहीं था, लेकिन शारदा ने सबसे पहले आगे बढ़कर साथ दिया, अपने पति के साथ खुद मजदूरी की, कुछ पैसे जोड़े और थोडा सहयोग बजाज फाउंडेशन संस्थान से लेकर एक टंकी बनवाया ।

वर्षा जल संचयन टैंक के निर्माण से अब परिवार की सामुदायिक टंकी से पानी लेने की निर्भरता समाप्त हुई। पहले चार से पांच सदस्यों वाले परिवार अपनी दैनिक जल आवश्यकताओं के लिए सामुदायिक टंकी पर निर्भर रहते थे या दूर से महंगे पानी टैंकर मंगवाना पड़ता था, जिस पर उन्हें हर महीने लगभग ₹2000 से ₹3,000 तक खर्च करना पड़ता था। अब वर्षा जल संचयन टंकी के माध्यम से उन्हें अपने घर परिसर में ही पानी उपलब्ध हो रहा है, जिससे उनकी आर्थिक बचत भी हो रही है और पानी की उपलब्धता भी सुनिश्चित हुई है। यह प्रणाली सूखा, रेतीले तूफान, अत्यधिक गर्मी के प्रभावों जैसी कठिन परिस्थितियों में परिवार के लिए एक महत्वपूर्ण सहारा साबित हुई है। इस पहल के अंतर्गत 15,000 लीटर क्षमता का जल भंडारण ढांचा विकसित किया गया है, जिससे वर्षा जल को सुरक्षित रूप से संग्रहित कर लंबे समय तक उपयोग में लाया जा सकता है।

कुछ महीनों बाद बारिश आई। पहली बार शारदा ने अपने घर के पास बने टैंक को पानी से भरते देखा। उस दिन शारदा ने महसूस किया कि पानी की हर बूंद में उम्मीद छिपी होती है। उसकी आंखों में खुशी के आंसू थे। अब उसे कई किलोमीटर दूर पानी लेने नहीं जाना पड़ता है।

विरासत बन रही आजीविका की नई राह

"प्रकृति और संस्कृति के संगम की मिशाल है बीरन"

छत्तीसगढ़ राज्य के कबीरधाम जिले की मैकल पर्वत श्रृंखला के तलहटी तरेगांव जंगल क्षेत्र में बसे विशेष संरक्षित जनजाति बैगा समुदाय की जीवन शैली प्रकृति, संस्कृति एवं अपनी परंपराओं से जुड़ी हुई है।

विलुप्त होती घांस, कम होते वन क्षेत्र, परम्परागत हस्तशिल्प , सांस्कृतिक धरोहर पर संकट गहराता जा रहा था, अपने प्राचीन श्रृंगार के खो जाने का डर सताने लगी। ऐसा श्रृंगार जिसे महिलाएं एवं पुरुषों दोनों के द्वारा सांस्कृतिक पर्व दसरा, गिरदा, बैगा नृत्य में उपयोग करते थे। इस श्रृंगार को बीरन कहते हैं। बीरन हस्तशिल्प, प्रकृति, कला-कौशल का बेजोड़ संगम है। इसे तैयार करना समुदाय की प्रेम, साधना और समर्पण से कम नहीं है, पारिजात वृक्ष की टहनी के रेशे और सूताखर नामक जंगली घांस से मिलकर कुशल हाथों की कारीगिरी से बनता है बीरन।

चंद्रकांत यादव
कबीरधाम,
छतीसगढ़

बीरन को तैयार करना हालांकि कोई आसान काम नहीं है, इसके लिए कुशल शिल्पकारी का ज्ञान होना अनिवार्य है। बीरन की एक रिंग तैयार करने में कम से कम 5 मिनट का समय लगता है, एक माला में 60 से 80 रिंग होते हैं। कच्चा उत्पाद कम से कम 25-25 ग्राम ही उपयोग होता है।

पर्यावरण प्रभाव, बढ़ते एक फसलीय खेती के प्रभाव से धीरे धीरे सुताखर घांस कम होते जा रहे हैं। क्योंकि सुताखर घांस केवल कोदो कुटकी मिलेट्स के खेतों में ही उगते हैं। इसी तरह पारिजात वृक्ष गांव से दूर नदी एवं पहाड़ियों के पास एक दो वृक्ष ही बचे हुए हैं। नई पीढ़ियों में बीरन हस्तशिल्प बुनाई की रुचि में कमी एवं परंपरागत कौशल ज्ञान भी लुप्त हो रहे हैं।

इस विकट समस्या के समाधान के लिए पद्मश्री अर्जुन सिंह जी और समाज के प्रदेश अध्यक्ष इतवारी मछिया जी ने विचार किया कि बैगा समुदाय की सांस्कृतिक विरासत को बनाए रखना होगा तो प्रकृति का संरक्षण करना होगा। फिर शुरू हुई घांस, पारिजात वृक्ष एवं बीरन हस्तशिल्प कला को संरक्षण करने की प्रक्रिया। ग्रामोदय ग्राम विकास समिति की टीम शासकीय विभिन्न विभागों और बीरन शिल्पकार महिलाओं को एक मंच पर लाने के लिए बीरन उत्सव का आयोजन किए। बीरन उत्सव में शासकीय विभागों के योजनाओं से बीरन के संरक्षण एवं समुदाय की ओर से नए पीढ़ियों को बीरन हस्तशिल्प को प्रोत्साहित करने का संकल्प लिया गया। यह ऐतिहासिक कार्यक्रम रहा, जिला मुख्यालय से लगभग 90 किलोमीटर दूर सरकारी विभागों के अधिकारी जिसमें जिला पंचायत, आदिम जाति कल्याण विभाग, वन विभाग, बैंक, प्रशिक्षण केंद्र, नाबार्ड जैसे प्रमुख विभाग मैकल पर्वत के आदिवासी दूरस्थ गांव में पहली बार पहुंचे थे। समुदाय के लिए भी नया अवसर था, जब पहली बार बीरन को आजीविका और उद्यमिता से जोड़ने विक्रय कीमत तय किया गया, अब तक केवल भेंट या स्वागत में बीरन को देते थे।

बीरन अब एक विरासत से आजीविका एवं उद्यमिता की ओर बढ़ रहा है, जो महिलाओं को नए रोजगार एवं आजीविका प्रदान कर रहा है। छिंदपुर और पिपरहा 2 ऐसे गांव हैं जहां महिलाएं समूह बनाकर बीरन को संगठित रूप से तैयार कर रहे हैं, कई शासकीय एवं गैर शासकीय कार्यक्रमों में शामिल होकर प्रदर्शनी एवं विक्रय स्टॉल सजा रहे हैं। पिछले छह महीने में लगभग 10 हजार रुपए की आय अर्जित कर चुके हैं। बीरन बनाने वाली श्रीबाई दीदी कहती हैं कि रोजगार नहीं होने से हम मैदानी क्षेत्रों में पलायन पर जाते थे। शोषण, परिवार से दूर रहते हुए मात्र 300 रुपए प्रति दिवस मजदूरी पर गन्ने के खेतों में कठिन परिश्रम करना पड़ता था, लेकिन अब हम अपने गांव और घर पर ही रहते हुए प्रकृति और संस्कृति का संरक्षण करते हुए बीरन बनाते हैं। इससे हमें बेहतर आय की शुरुआत हुई है, एक बीरन को 300 रुपए कीमत पर बेच रहे हैं।

बीरन को निरंतर बनाए रखने के लिए समुदाय सूताखर घांस एवं पारिजात वृक्ष के संरक्षण के लिए कार्य कर रहे हैं। महिलाओं द्वारा घांस को बढ़ावा देने कोदो कुटकी मिलेट्स के उत्पादन को प्रोत्साहित कर रहे हैं। पारिजात वृक्ष के वृक्षारोपण हेतु नर्सरी की तैयारी की गई है, इसके लिए विभागीय समन्वय बना रहे हैं। बीरन हस्तशिल्प प्रकृति आधारित आजीविका की नई राह गढ़ रहा है। इसलिए कहते हैं, घांस है तो आस है, प्रकृति के साथ है। कला और संस्कृति, जिंदगी के साथ है।।

विमला कॉस्मेटिक
एवं सिलाई केंद्र

बेटी वो दिन न देखे, जो मैंने देखे

राजस्थान, अलवर जिले के उमरैण में अरावली की तलहटी में बसा हुआ 600 परिवारों का एक छोटा सा गांव अलापुर 200 परिवार SC के और लगभग 400 परिवार OBC समुदाय के लोग रहते है। अलापुर में रहने वाली विमला की ज़िंदगी कभी अभावों से भरी हुई थी। आठ बहनों और दो भाइयों के बड़े परिवार में जन्मी विमला ने बचपन से ही गरीबी को बहुत करीब से देखा। पिता खेती और मजदूरी करके परिवार चलाते थे। विमला से बड़ी 5 बहिनों की शादी में लिए गये कर्ज और रोज़ी-रोटी की तलाश में माता-पिता को पलायन करना पड़ता था, जिससे विमला की पढ़ाई पांचवीं कक्षा के बाद छूट गई।

खेमचंद जौनवाल
इब्तिदा संस्था
अलवर, राजस्थान

शादी से पहले विमला के मन में भी कई सपने थे- एक उम्मीद थी कि शादी के बाद ज़िंदगी आसान होगी, उसके सपने पूरे होंगे। लेकिन शादी के बाद परिस्थितियां ज़्यादा नहीं बदलीं। ससुर का पहले ही देहांत हो चुका था। परिवार की पूरी ज़िम्मेदारी उनके पति सुरेन्द्र कुमार पर थी, जो मजदूरी कर घर चलाते थे। विमला मन ही मन चाहती थीं कि काश वह भी अपने पति का सहारा बन पातीं, लेकिन उस समय उनके पास न हुनर था, न संसाधन।

विमला की ज़िंदगी में मोड़ तब आया, जब गांव की एक महिला ने इब्तिदा संस्था द्वारा संचालित महिला आजीविका संवर्धन कार्यक्रम के बारे में बताया। इब्तिदा एक सामुदायिक विकास संगठन है, जो राजस्थान के अलवर सहित तीन राज्यों के 638 गांवों में 83,300 से अधिक परिवारों के साथ कार्य करते हुए शिक्षा, आजीविका, बालिका सशक्तिकरण, पर्यावरण एवं जल संरक्षण तथा अधिकार-आधारित पहलों के माध्यम से वंचित समुदायों के जीवन में सकारात्मक बदलाव ला रहा है। संगठन समुदाय की भागीदारी को केंद्र में रखते हुए महिलाओं, किशोरियों और युवाओं को सशक्त बनाता है, ताकि वे आत्मनिर्भर बनकर अपने परिवार और समाज के विकास में सक्रिय भूमिका निभा सकें।

विमला के लिए यह वही मौका था, जिसका इंतज़ार वो कब से कर रही थीं। संस्था के कार्यकर्ता से मिलकर सितम्बर 2022 में कार्यक्रम से जुड़ गईं। विमला ने नए डिज़ाइन और सिलाई का प्रशिक्षण लिया। स्वयं सहायता समूह के माध्यम से 20 हजार रुपये का ऋण लेकर उसने एक छोटी-सी कॉस्मेटिक की दुकान शुरू की और सिलाई भी करने लगी । शुरुआत आसान नहीं थी। गांव में 5-6 कॉस्मेटिक की दुकान थी छोटी सिलाई मशीन से कुछ कपडे ही सिलाई कर पाती थी इसलिए कमाई बहुत कम हो पाती थी । उसके बाद संस्था के सहयोग से उन्हें सिलाई मशीन उपलब्ध करवाई। अब दुकान के साथ-साथ सिलाई का काम भी बढ़ना शुरू हो गया।

धीरे-धीरे विमला की मेहनत रंग लाने लगी। अलापुर में ही नहीं बल्कि आस पास के गावों (मोहब्बतपुर, जाटोली, खेड़का, हिम्मतपुर और अकबरपुर आदि) में भी विमला के डिज़ाइन और काम की चर्चा होने लगी। काम इतना बढ़ गया कि अकेले संभालना मुश्किल हो गया। तब विमला ने आसपास गांव की दूसरी लड़कियों को सिलाई सिखाना शुरू किया। आज करीब 20 लड़कियां उनके साथ जुड़कर घर बैठे काम कर रही हैं। एक लड़की को उसने नियमित वेतन पर काम संभालने के लिए लगाया है।

विमला यहीं नहीं रुकीं। उसने अपनी छोटी बहन और अपने पति को भी इस काम में जोड़ लिया । आज उनके पति सिलाई मशीन रिपेयरिंग भी करते हैं, जिससे परिवार की आय और मजबूत हुई है।

दुकान की कमाई से विमला ने दुकान में इन्वर्टर और 2 जेक

सिलाई मशीन खरीदीं , अपने लिए सोने का लॉकेट बनवा लिया और पुराने घर के साथ नया मकान भी बैंक लोन लेकर बनवाना शुरू कर दिया।

कभी जिन सपनों को देखना भी मुश्किल था, आज वे हकीकत बन रहे हैं।

विमला की सबसे बड़ी खुशी उसकी बेटी से जुड़ी है। उन्होंने अपनी बेटी को इंग्लिश मीडियम स्कूल में दाखिला दिलाया और आने-जाने के लिए वाहन की व्यवस्था भी की। विमला कहती हैं—

"मैं नहीं चाहती कि मेरी बेटी वो दिन देखे, जो मैंने देखे हैं।"

"आज मुझे अपने सपने पूरे करने के लिए सोचना नहीं पड़ता।"

"इब्तिदा संस्था के मार्गदर्शन से ही मैंने मेरे सपनों को साकार किया है।"

आज विमला आत्मनिर्भर हैं, आत्मविश्वास से भरी हुई हैं और दूसरों के लिए प्रेरणा बन चुकी हैं।

विमला की यह कहानी सिर्फ़ एक महिला की नहीं, बल्कि उस बदलाव की कहानी है, जो सही मार्गदर्शन और सहयोग से संभव होता है।

इब्तिदा संस्था ने विमला को हुनर नहीं दिया, बल्कि विमला जैसी 526 महिलाओ को उधामिता की और प्रेरित कर सक्षम बनाया है जिसमे सिलाई, कॉस्मेटिक, पार्लर, गारमेन्ट, मिट्टी बर्तन, डिस्पोजल एवं सब्जी उत्पादन बिक्री जैसे अन्य कार्य करके भी महिलाये उद्यमिता से अपने परिवार की आय बढ़ाने में सहयोग देकर सशक्त हो रही है।

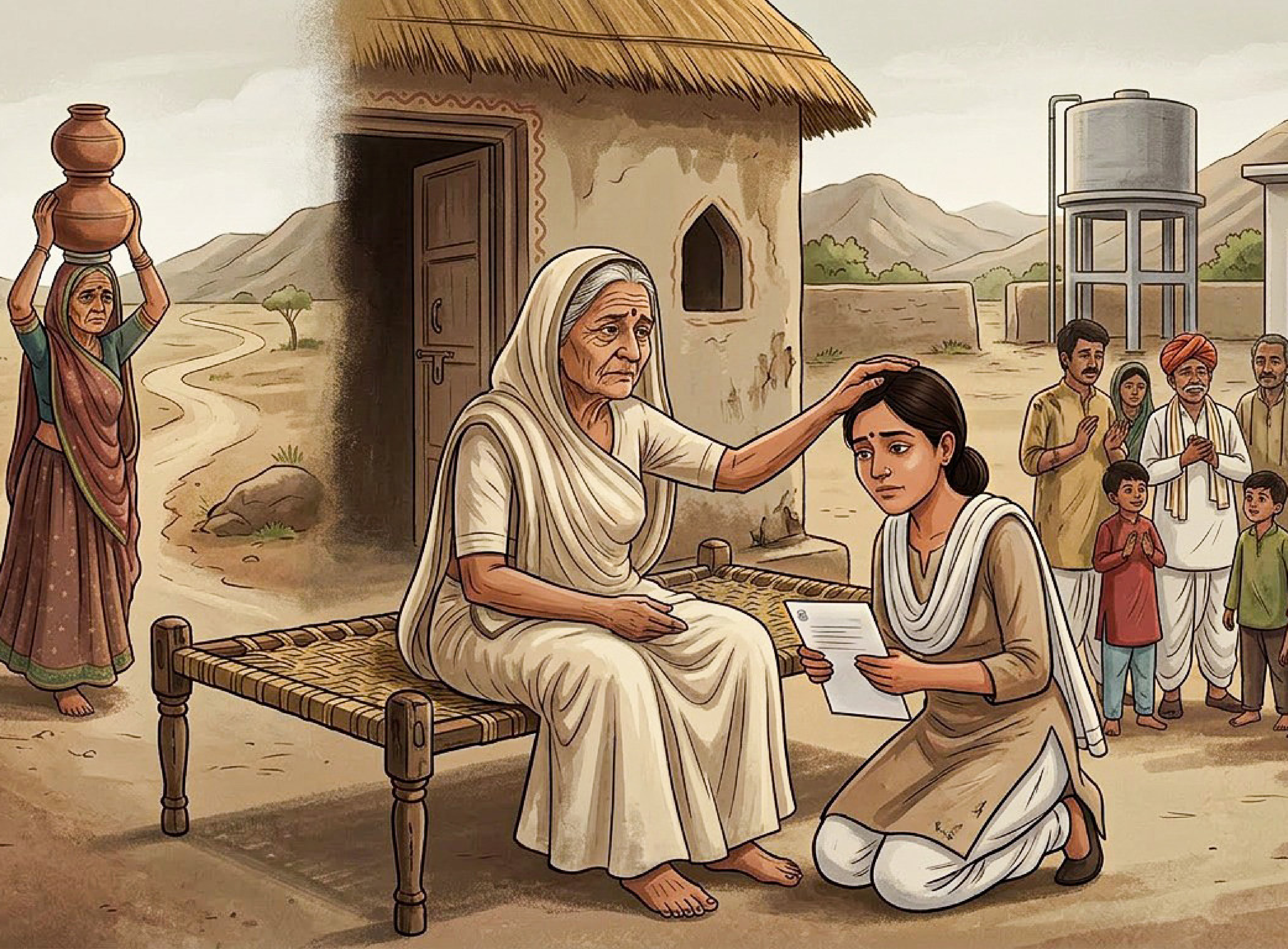

दादी सा के आशीर्वाद से जब उन्हें मिलनी लगी पेंशन

दादी सा का सबसे बड़ा संघर्ष केवल गरीबी नहीं था। उनका सबसे बड़ा दुख यह था कि पिछले 35 वर्षों से उनकी वृद्धा पेंशन बंद पड़ी थी। जन आधार कार्ड न होने के कारण उनकी पेंशन बंद हो गई। इसके बाद वर्षों तक उन्होंने अपनी समस्या को हर उस व्यक्ति के सामने रखा जो उनकी ढाणी में आता-जाता था। वे अक्सर कहती थीं, "बेटा, पानी और लकड़ी लाने के लिए तीन किलोमीटर दूर जाना पड़ता है। अगर पेंशन शुरू हो जाए तो थोड़ा सहारा मिल जाए।"

आंचल शुक्ला
सामाजिक कार्यकर्ता
नई दिल्ली

राजस्थान के डीडवाना-कुचामन जिले के परबतसर ब्लॉक के ग्राम खिदरपुरा में स्थित कालबेलियों की एक छोटी-सी ढाणी में लगभग 85 वर्ष की दादी सा रहती हैं। उनका जीवन संघर्षों से भरा रहा है। परिवार में उनकी बहू और चार छोटे बच्चे हैं। पति और बेटा दोनों अब इस दुनिया में नहीं हैं। कच्चे घर में रहने वाला यह परिवार दादी सा और उनकी बहू की मजदूरी पर निर्भर है। कभी कारखाने में काम मिलता है तो कभी मनरेगा में। इसी से घर का गुज़ारा चलता है।

लेकिन दादी सा का सबसे बड़ा संघर्ष केवल गरीबी नहीं था। उनका सबसे बड़ा दुख यह था कि पिछले 35 वर्षों से उनकी वृद्धा पेंशन बंद पड़ी थी। जन आधार कार्ड न होने के कारण उनकी पेंशन बंद हो गई। इसके बाद वर्षों तक उन्होंने अपनी समस्या को हर उस व्यक्ति के सामने रखा जो उनकी ढाणी में आता-जाता था। वे अक्सर कहती थीं, “बेटा, पानी और लकड़ी लाने के लिए तीन किलोमीटर दूर जाना पड़ता है। अगर पेंशन शुरू हो जाए तो थोड़ा सहारा मिल जाए।”

उनकी आंखों में हर बार उम्मीद दिखाई देती थी, लेकिन समय बीतने के साथ वह उम्मीद भी थकने लगी थी।

इसी दौरान मंथन कोटरी की टीम उस क्षेत्र में पानी की समस्या पर काम करने पहुंची। मंथन कोटरी एक प्रतिष्ठित सामाजिक संस्था है, जो राजस्थान के अजमेर एवं डीडवाना-कुचामन जिलों में जल प्रबंधन, आजीविका संवर्धन, महिला सशक्तिकरण, सरकारी योजनाओं तक पहुंच सुनिश्चित करना, महिला रात्रि शाला एवं सामुदायिक विकास के क्षेत्र में विगत कई वर्षों से सक्रिय रूप से कार्यरत है। उनके साथ शहर से आई एक युवा लड़की इंटर्नशिप कर रही थी। दादी सा ने एक बार फिर उसी उम्मीद के साथ अपनी समस्या उसके सामने रखी। लड़की ने उनकी बात ध्यान से सुनी और विनम्रता से कहा, “दादी सा, अभी मेरे पास इतनी

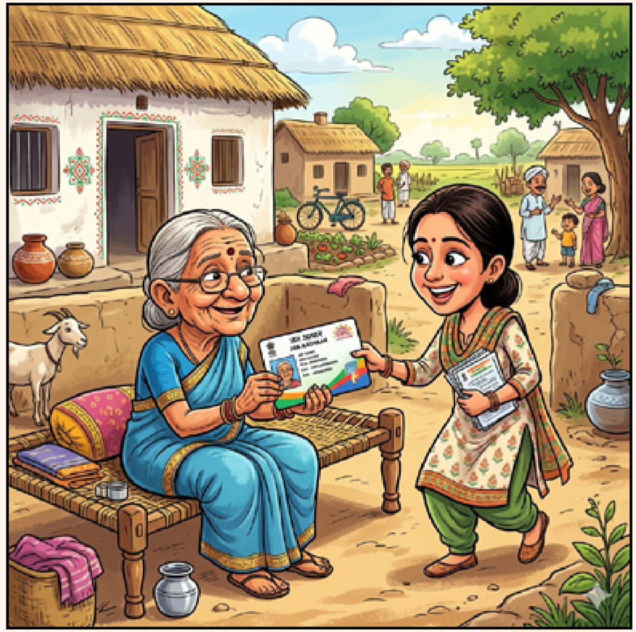

शक्ति नहीं है कि मैं आपकी इस समस्या का समाधान कर सकूं, लेकिन आपका आशीर्वाद मिला तो शायद आने वाले समय में यह संभव हो सके।”

दादी सा मुस्कुराईं और बोलीं, “बेटा, मैं तुझे आशीर्वाद देती हूं। अगली बार जब तू आएगी, तो जो करना चाहती है, वह कर पाएगी।” यह केवल एक आशीर्वाद नहीं था, बल्कि एक भरोसा था, जिसने उस युवा लड़की के मन में गहरी जगह बना ली।

समय बीतता गया। वही लड़की आगे चलकर मंथन कोटरी में प्रोजेक्ट मैनेजर के रूप में जुड़ गई। संयोग से उसे फिर उसी क्षेत्र में

काम करने का अवसर मिला। इस बार वह अकेली नहीं थी। उसके साथ उसकी टीम थी और बदलाव लाने का संकल्प भी।

टीम ने मिलकर सबसे पहले दादी सा का जन आधार कार्ड बनवाया। इसके बाद विभिन्न प्रक्रियाओं को पूरा करते हुए उनका सत्यापन कराया गया। इसी दौरान समुदाय के सहयोग और चंदा जुटाकर पानी के टैंक भी बनवाए गए, जिससे लोगों को पानी की समस्या से कुछ राहत मिली। ढाणी में महिलाओं के लिए रात्रि शाला की शुरुआत भी की गई, जिससे वे शिक्षा और जागरूकता से जुड़ सकें।

लेकिन सबसे बड़ी खुशी अभी बाकी थी।

जन आधार कार्ड बनने के बाद दादी सा की वर्षों से बंद पड़ी पेंशन फिर शुरू हुई। इतना ही नहीं, उन्हें लगभग 40,000 रुपये की बकाया राशि भी प्राप्त हुई। यह केवल एक आर्थिक सहायता नहीं थी, बल्कि 35 वर्षों के इंतज़ार, संघर्ष और उम्मीद का सम्मान था। दादी सा की खुशी देखते ही बनती थी। उनका आशीर्वाद अब केवल उस लड़की तक सीमित नहीं रहा था, बल्कि पूरे समुदाय के लिए प्रेरणा बन गया था। इसी प्रक्रिया के दौरान प्रशासन द्वारा पहली बार इस ढाणी का बेसलाइन सर्वे भी किया गया, ताकि भविष्य में यहां और विकास कार्यों की संभावनाएं बन सकें।

यह केवल एक सफलता की कहानी नहीं है। यह एक बुज़ुर्ग महिला के धैर्य, एक युवा इंटर्न के विश्वास और मंथन कोटरी की टीम के सामूहिक प्रयासों की कहानी है। यह कहानी बताती है कि बदलाव कभी अकेले नहीं आता। वह लोगों के विश्वास, साझेदारी और लगातार किए गए प्रयासों से जन्म लेता है।

अपने सपने पूरे कर सकता हूं

राजस्थान के अजमेर जिले के किशनगढ़ ब्लॉक के छोटे से गांव मोहनपुरा में रहने वाला आदित्य कालबेलिया भी उन हजारों बच्चों में से एक था जिनके सपने आर्थिक कठिनाइयों के बोझ तले दबने लगे थे। आदित्य पढ़ना चाहता था, स्कूल जाना चाहता था, लेकिन परिस्थितियां उसके साथ नहीं थीं। घर की सीमित आय, संसाधनों की कमी और पढ़ाई के लिए आवश्यक सामग्री का अभाव उसके सामने बड़ी चुनौती बन गया था। उसके पास न ठीक से स्कूल बैग था और न ही अपनी किताबों और कॉपियों को सुरक्षित रखने का कोई साधन। कई बार वह अपनी किताबें प्लास्टिक की थैली में रखकर स्कूल जाता था। बरसात में कॉपियां भीग जातीं, फट जातीं जिससे धीरे-धीरे वह पढ़ाई से निराश होने लगा।

दीपक कुमार
ड्रीम्स संस्था,
किशनगढ़, अजमेर

एक समय ऐसा भी आया जब आदित्य को लगने लगा कि शायद पढ़ाई उसके लिए नहीं है। उसने स्कूल छोड़कर मजदूरी करने का विचार तक बना लिया था, ताकि परिवार की आर्थिक मदद कर सके। इसी दौरान

डेवलपमेंट आफ रूरल एजुकेशन एग्रीकल्चर एंड मेडिकल सोसायटी (ड्रीम्स) की टीम ने अपने 'माय बैग माय एजुकेशन' अभियान के अंतर्गत मोहनपुरा गांव में सर्वेक्षण किया। सर्वेक्षण के दौरान टीम ने ऐसे बच्चों की पहचान की जो संसाधनों के अभाव में शिक्षा से दूर होते जा रहे थे। इसी प्रक्रिया में आदित्य की स्थिति सामने आई।

ड्रीम्स टीम ने आदित्य को एक शिक्षा किट प्रदान की, जिसमें स्कूल बैग, नोटबुक, ज्योमेट्री बॉक्स, पानी की बोतल, लंच बॉक्स तथा अन्य आवश्यक शैक्षणिक सामग्री शामिल थी। किसी के लिए यह एक सामान्य शिक्षा किट हो सकती है, लेकिन आदित्य के लिए यह उसके सपनों को फिर से जीवित करने वाली उम्मीद थी।

इसका परिणाम यह हुआ कि आज आदित्य नियमित रूप से स्कूल जाता है। उसकी किताबें सुरक्षित रहती हैं, पढ़ाई में उसकी रुचि बढ़ी है और उसके चेहरे पर एक नया आत्मविश्वास दिखाई देता है। अब वह पढ़-लिखकर एक सम्मानजनक जीवन जीने का सपना देखता है।

जब उससे उसके भविष्य के बारे में पूछा गया तो उसने मुस्कुराते हुए कहा, "पहले मुझे लगता था कि पढ़ाई छोड़कर काम करना पड़ेगा, लेकिन अब मुझे विश्वास है कि मैं पढ़-लिखकर अपने सपने पूरे कर सकता हूं।"

आदित्य की यह कहानी बताती है कि कभी-कभी एक छोटी-सी मदद भी किसी बच्चे का पूरा भविष्य बदल सकती है।

समुदाय की आवाज को पहचान दें,
कहानियों को बदलाव की उड़ान दें।

बंजर जमीन पर हरियाली की 'शोभा'

महिला सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता जैसे शब्द सुनने में भले ही बड़े और प्रभावशाली लगते हों, लेकिन इन शब्दों का वास्तविक अर्थ तब समझ में आता है जब कोई महिला कठिन परिस्थितियों से लड़कर अपने परिवार और समाज के लिए प्रेरणा बन जाती है। यह कहानी ऐसी ही एक महिला, शोभाबाई पाटील की है, जिन्होंने संघर्षों को अवसर में बदलकर अपने जीवन की नई पहचान बनाई।

ज्योति पगार
प्रभात विकास मंच,
धुले (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र राज्य के धुले जिले के धुले तालुका के चिंचवार गांव में रहने वाले जगन भटू पाटील और सखुबाई पाटील के तीन पुत्र थे। इनमें सुभाष सबसे बड़े थे। वर्ष 2006 में सुभाष का विवाह शोभाबाई के साथ हुआ। परिवार की आर्थिक स्थिति कमजोर थी। बड़े पुत्र होने के कारण सुभाष पर माता-पिता, छोटे भाइयों और अपने परिवार की जिम्मेदारी थी।

वर्ष 2016 में परिवार का बंटवारा हुआ। सुभाष के हिस्से में केवल दो बीघा जमीन आई, जिसमें से आधा एकड़ जमीन बंजर थी। परिवार का गुजारा मजदूरी और छोटी खेती पर निर्भर था। इसी बीच शोभाबाई की बीमारी के इलाज पर काफी खर्च हुआ और परिवार कर्ज के बोझ तले दब गया। आर्थिक संकट इतना बढ़ गया कि वर्ष 2021 में सुभाष ने जहर खाकर कर आत्महत्या का प्रयास भी किया। सौभाग्य से उनका जीवन बच गया, लेकिन इस घटना ने पूरे परिवार को झकझोर दिया।

यहीं से कहानी ने नया मोड़ लिया। शोभाबाई ने परिस्थितियों के सामने हार मानने के बजाय संघर्ष का रास्ता चुना। उन्होंने निश्चय किया कि वे परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारने में योगदान देंगी। खेती के साथ-साथ वे महिला बचत समूह से ज्ञात हुई और हर्षदा नामक महिला स्वयं सहायता समूह से जुड़ गई। हर महीने सौ रुपये स्वयं-सहायता समूह मे भरते-भरते इसी दौरान उन्हें पता चला कि प्रभात विकास मंच सामाजिक संस्था द्वारा राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (NAB-ARD) के सहयोग से महिलाओं के लिए स्वरोजगार आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं।

प्रभात विकास मंच, धुले एक सामाजिक संस्था है, जो पिछले 22 वर्षों से शोभाबाई जैसी अनेक महिलाओं के साथ आजीविका एवं उद्यम विकास के क्षेत्र में कार्य कर रही है। प्रारंभिक दौर में संस्था का मुख्य उद्देश्य महिलाओं की बचत समूह आंदोलन में सहभागिता बढ़ाना था। महिलाओं को केवल घर-परिवार और बच्चों तक सीमित न रखते हुए संस्था ने उन्हें बैंकिंग, वित्तीय लेन-देन और आर्थिक प्रबंधन जैसी महत्वपूर्ण बातें सिखाईं।

वर्ष 2008 से 2012 के दौरान संस्था ने महिलाओं को कौशल आधारित प्रशिक्षण प्रदान किया, जिसमें गोधड़ी, चौघड़ी और रजाई सिलाई जैसे कार्य शामिल थे। इस प्रशिक्षण के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनने और आय के नए स्रोत विकसित करने का अवसर मिला। प्रभात विकास मंच के अध्यक्ष विनोद पगार सदैव इस प्रयास में रहते हैं कि महिलाओं को रोजगार के अवसर मिलें, उनके परिवार की आर्थिक स्थिति मजबूत हो तथा कौशल आधारित उद्योग स्थापित हों।

इसके बाद वर्ष 2022 से 2024 के दौरान संस्था ने महिलाओं के लिए सूक्ष्म उद्यम विकास का नया अभियान शुरू किया। इस अंतर्गत महिलाओं को खिंची से विभिन्न उत्पाद बनाने सहित अन्य लघु उद्योगों का प्रशिक्षण दिया गया। इस पहल ने महिलाओं को आत्मनिर्भर बनने, स्वरोजगार के अवसर प्राप्त करने तथा अपने आर्थिक विकास की नई दिशा तय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इसमें गांव की शोभा बाई, अरुणा बाई,रेणुका बाई, हिराबाई, भटाबाई इन्होने प्रशिक्षण के लिये फार्म भरा। जब उन्होंने प्रशिक्षण लेने का निर्णय लिया, तब गांव के कुछ लोगों ने उनका मजाक उड़ाया। लोगों ने ताने दिए कि एक ग्रामीण महिला प्रशिक्षण लेकर क्या कर लेगी। लेकिन शोभाबाई ने इन बातों को अपने आत्मविश्वास के आगे कमजोर पड़ने नहीं दिया और महिलाओं को भी समझाया। उन्होंने प्रशिक्षण पूरा

किया और सीखा कि उत्पाद कैसे तैयार किए जाते हैं, उनकी पैकेजिंग, लेबलिंग और मार्केटिंग कैसे की जाती है तथा बाजार तक कैसे पहुंचा जाता है। इसमे तीन तरीके से उन्हे पैसे मिलने लगे। एक खुद माल बनाकर बेचने से, दूसरा गांव के लोगों को सिर्फ खिंची बनाकर देने से और तीसरा गांव के लोगो से उत्पाद बनाने के लिये लगने वाली सब सामग्री लेकर माल बनाकर देने का मेहताना लेकर।

प्रशिक्षण के बाद अपने गांव में उद्योग स्थापित करना आवश्यक था, लेकिन सबसे बड़ी चुनौती पूंजी की थी। बैंक ऋण देने को तैयार नहीं था। तब शोभाबाई ने साहस दिखाते हुए अपने चांदी के गहने गिरवी रख दिए और महिला बचत समूह से ऋण लिया। इन पैसों से उन्होंने आवश्यक मशीन खरीदी और अपना उद्योग शुरू किया।

धीरे-धीरे उनके उत्पादों की मांग बढ़ने लगी। पुणे, मुंबई जैसे बड़े शहरों तक उनके उत्पाद पहुंचने लगे। प्रतिवर्ष लगभग डेढ़ लाख रुपये का लाभ मिलने लगा। इस आय का उपयोग उन्होंने केवल व्यवसाय बढ़ाने के लिए नहीं, बल्कि अपनी खेती को विकसित करने के लिए भी किया।

अपने हिस्से में आई बंजर जमीन को उन्होंने समतल करवाया, उसमें जैविक खाद डाली और लगभग डेढ़ लाख रुपये खर्च कर शेड का निर्माण किया। आज उनकी डेढ़ एकड़ जमीन पर बाजरा, गेहूं तथा अन्य मिलेट्स के साथ-साथ पालक, टमाटर और मिर्च जैसी सब्जियों की जैविक खेती होती है। खेती में वे रासायनिक उर्वरकों के बजाय गोबर खाद, जीवामृत और वर्मी कम्पोस्ट का उपयोग करती हैं। इन्हीं उत्पादों से वे बाजरा पापड़, चकली, कुरड़ई, टमाटर पापड़, पालक पापड़ और अन्य मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार करती हैं। उनके उद्योग से गांव की चार से पांच महिलाओं को रोजगार भी मिला है। सिंचाई की समस्या दूर करने के लिए उन्होंने खेत में बोरवेल भी करवा दिया।

शोभाबाई की सबसे बड़ी उपलब्धि केवल आर्थिक प्रगति नहीं है, बल्कि शिक्षा के प्रति उनकी जागरूकता भी है। जिस समाज में लड़कियों की शिक्षा को अधिक महत्व नहीं दिया जाता, उसी समाज में उन्होंने अपनी बेटी को उच्च शिक्षा दिलाने का निर्णय लिया। उनकी बेटी वर्तमान में बी.ए. की पढ़ाई कर रही है और पुलिस भर्ती की तैयारी कर रही है, जबकि उनका पुत्र कुणाल बारहवीं विज्ञान शाखा में अध्ययनरत है। आज शोभाबाई का सपना अपने खेत में एक प्रशिक्षण केंद्र स्थापित करना है, जहां ग्रामीण महिलाओं को प्रशिक्षण देकर उन्हें आत्मनिर्भर बनाया जा सके। उनकी कहानी यह साबित करती है कि अवसर, प्रशिक्षण, आत्मविश्वास और परिवार का सहयोग मिल जाए तो कोई भी महिला अपनी परिस्थितियों को बदल सकती है।

यह केवल एक महिला की सफलता की कहानी नहीं है, बल्कि यह संदेश है कि सशक्तिकरण का वास्तविक अर्थ आर्थिक आत्मनिर्भरता, शिक्षा, नेतृत्व और समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। शोभाबाई ने अपने संघर्षों को शक्ति बनाया और स्वयं आगे बढ़ते हुए अन्य महिलाओं के लिए भी रोजगार और प्रेरणा का मार्ग तैयार किया है।

झबुआ महिला स्वावलंम्बन केंन्द्र
JHABUA MAHELIA SWAVALAMBAN KENDRA
COMMUNITY
FOND

सूदखोरी का जाल तोड़ती 'धोड़ी बैंक'

मध्यप्रदेश के आदिवासी अंचल झाबुआ जिले में एक समय ऐसा था जब सूरज ढलने के बाद केवल रात का अंधेरा ही नहीं, बल्कि कर्ज का काला साया भी गहरा जाता था। यहां गरीबी केवल फटे हुए कपड़ों या खाली थाली का नाम नहीं थी, बल्कि यह एक ऐसी नियति बन चुकी थी जिससे निकलना नामुमकिन लगता था। लेकिन आज, उसी झाबुआ की माटी से एक ऐसी गूंज सुनाई दे रही है जिसने 'काली बैंक' के शोषणकारी तंत्र को उखाड़ फेंका है। यह कहानी है 'धोड़ी बैंक' (सफेद बैंक) की और उन 6,000 से अधिक महिलाओं की, जिन्होंने संगठित होकर गरीबी के खिलाफ युद्ध छेड़ दिया है और रू 2.5 करोड़ के वित्तीय प्रबंधन की नींव रखी है।

दीपक पाटीदार
महिला शक्ति संघ,
झाबुआ

अस्सी के दशक में झाबुआ के ग्रामीण अंचलों में सूदखोरी की व्यवस्था को स्थानीय भाषा में 'काली बैंक' कहा जाता था। नाम के अनुरूप ही इसका काम भी काला और डरावना था। आदिवासी समाज में जब किसी को बीमारी, शादी-ब्याह या खेती के लिए बीज-खाद की तत्काल आवश्यकता होती, तो उनके पास इन साहूकारों के पास जाने के अलावा कोई विकल्प नहीं था।

यहां ऋण देने का गणित शोषण की पराकाष्ठा था। अगर कोई 100 रुपये कर्ज मांगता, तो उसे हाथ में केवल 90 रुपये मिलते थे-10 रुपये अग्रिम ब्याज के रूप में पहले ही काट लिए जाते थे। लेकिन उसे लौटाने 110 रुपये पड़ते थे। वसूली का आलम यह था कि साहूकार सुबह 5 बजे ही दरवाजे पर दस्तक दे देते थे। पैसे न होने पर मवेशी, बर्तन या पुश्तैनी जमीन तक गिरवी रख ली जाती थी। यह व्यवस्था गरीबी को कम करने के बजाय उसे एक अंतहीन चक्रव्यूह में बदल देती थी, जहां पिता का कर्ज बेटे के कंधों पर विरासत में मिलता था।

इस घुटन भरे माहौल में बदलाव की पहली किरण 1980 के दशक के उत्तरार्ध (1987) में दिखाई दी। जुनाखेड़ा गांव में एक छोटी सी चौपाल सजी, जहां ग्रामीणों ने अपनी नियति को बदलने का ऐतिहासिक फैसला किया। उन्होंने तय किया कि वे साहूकारों के सामने हाथ फैलाने के बजाय अपना खुद का 'ग्राम कोष' बनाएंगे।

यही 'ग्राम कोष' आगे चलकर 'धोड़ी बैंक' (सफेद बैंक) कहलाया। इसकी शुरुआत महज़ रू. 2,000 के सामूहिक अंशदान से

हुई थी। सिद्धांत सरल थाः 'गांव का पैसा, गांव के लोगों के लिए और गांव के ही नियंत्रण में।' यहां ब्याज दरें कम थीं, प्रक्रिया पारदर्शी थी और सबसे बड़ी बात-इसमें कर्जदार का सम्मान था। धीरे-धीरे यह मॉडल आसपास के गांवों में फैल गया और भविष्य की 'महिला शक्ति' की मजबूत नींव बना।

धोड़ी बैंक ने रास्ता दिखाया, लेकिन उसे एक राष्ट्रव्यापी मिसाल बनाने का श्रेय झाबुआ की ग्रामीण महिलाओं को जाता है। समय के साथ पुरुषों द्वारा शुरू की गई इस पहल की कमान महिलाओं ने थामी और जन्म हुआ 'महिला शक्ति संघ' का। 1987 में बोया गया वह छोटा सा बीज आज एक विशाल वटवृक्ष बन चुका है- आज इस संगठन से 40 से अधिक गांवों की 6,000 से ज्यादा महिलाएं सीधे तौर पर जुड़ी हैं। वर्तमान में इस समूह द्वारा लगभग 2.5 करोड़ की राशि ऋण के रूप में वितरित की जा चुकी है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह 2.5 करोड़ केवल सरकारी अनुदान नहीं है, बल्कि यह उन महिलाओं की अपनी मेहनत की कमाई और चंद रुपयों की छोटी-छोटी बचतों का परिणाम है। यह अब एक आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मजबूत आधार बन चुका है।

अड़जी-पड़जी परंपरा का पुनर्जीवन

खेती में एक-दूसरे की मदद करने की प्राचीन परंपरा' अड़जी-पड़जी' को फिर से जीवित किया गया है। इससे मजदूरों पर होने वाला खर्च बचता है और गांवों में आपसी भाईचारा बढ़ता है। इन सामूहिक प्रयासों और बचतों के कारण प्रत्येक परिवार अब सालाना 20,000 से 30,000 की अतिरिक्त बचत कर पा रहा है। महिला शक्ति संघ का प्रभाव केवल बैंक बैलेंस या तिजोरियों तक सीमित नहीं रहा। इन महिलाओं ने ग्रामीण समाज की जड़ों में जमी कुरीतियों पर भी कड़ा प्रहार किया है- शादियों और मृत्यु भोज जैसे सामाजिक आयोजनों में होने वाले अनावश्यक खर्चों को कम करने के लिए संघ ने सामूहिक निर्णय लिए हैं। इससे परिवारों पर कर्ज का बोझ कम हुआ है। वहीं 2.5 करोड़ के ऋण वितरण ने गांवों में स्वरोजगार की ऐसी बाढ़ ला दी है कि महिलाएं अब केवल गृहणी नहीं, बल्कि कुशल प्रबंधक और उद्यमी बन चुकी हैं।

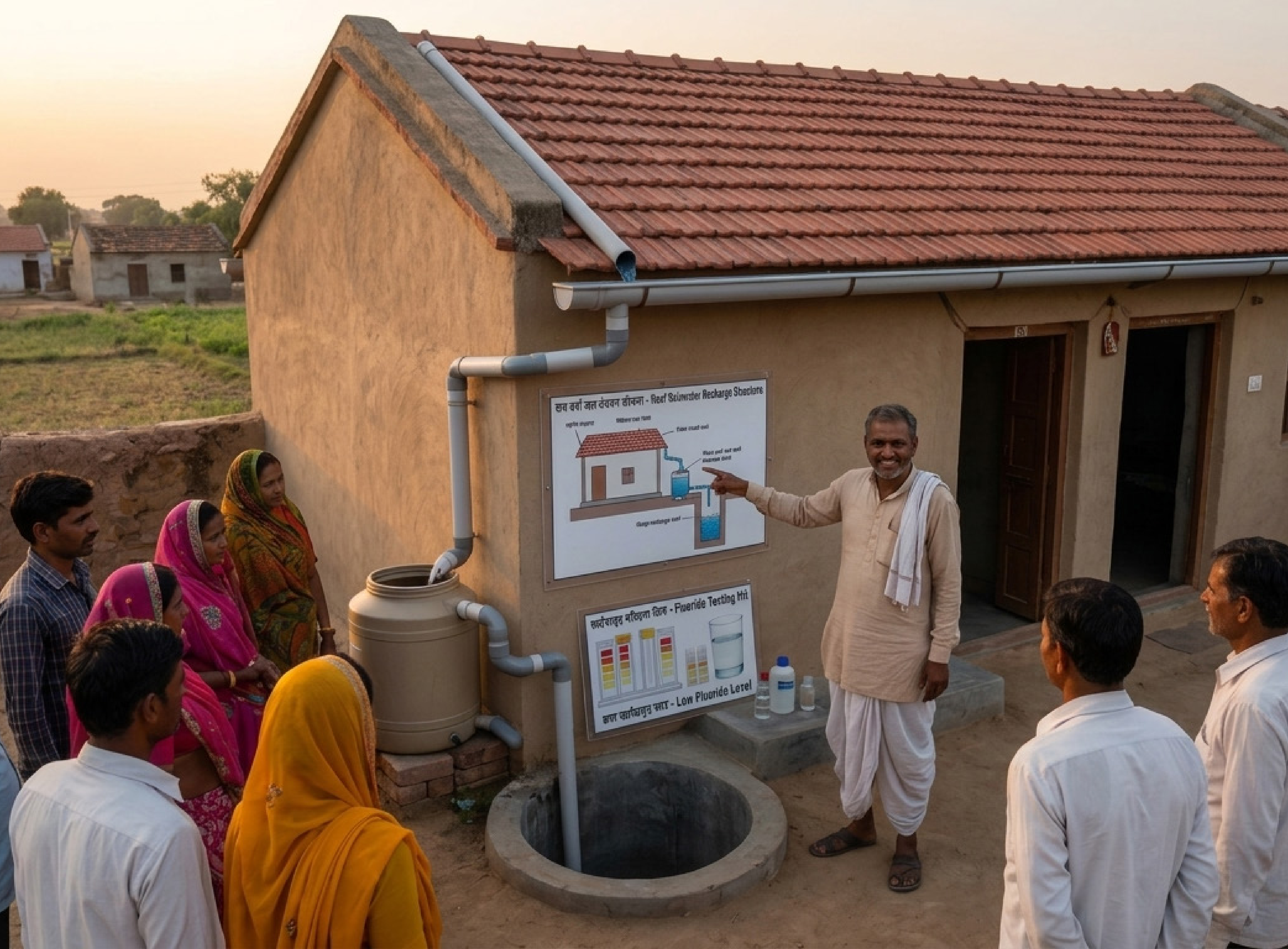
Pluoride Testing Hti
Low Pluoride Level

राजेश की पानीदार पहल

राजस्थान के श्रीमाधोपुर क्षेत्र में पानी की कमी और भूजल में फ्लोराइड की अधिक मात्रा लंबे समय से लोगों के लिए गंभीर समस्या बनी हुई थी। इसी क्षेत्र के एक किसान राजेश कुमार ने अपने गांव में जल संरक्षण और भूजल सुधार की दिशा में एक पानीदार पहल की, जिसने पूरे गांव के लिए राहत का कार्य किया है।

धीरज वानखेड़े
बजाज फाउण्डेशन, राजस्थान

राजेश कुमार नियमित रूप से संस्था द्वारा आयोजित कार्यक्रमों और किसान बैठकों में भाग लेते थे। इन कार्यक्रमों के दौरान उन्होंने जाना कि वर्षा जल को संरक्षित करके भूजल स्तर बढ़ाया जा सकता है तथा फ्लोराइड जैसी समस्याओं को भी काफी हद तक कम किया जा सकता है। उन्होंने सीखा कि रूफ रेन वाटर रिचार्ज स्ट्रक्चर (Roof Rain Water Recharge Structure) के माध्यम से घरों की छतों पर गिरने वाले वर्षा जल को सीधे जमीन के भीतर पहुंचाया जा सकता है।

सीखी गई जानकारी को केवल सुनने तक सीमित न रखते हुए राजेश कुमार ने अपने घर पर सबसे पहले रूफ रेन वाटर रिचार्ज स्ट्रक्चर का निर्माण करवाया। पहली ही बरसात में उन्होंने इसके सकारात्मक परिणाम देखे। वर्षा का पानी व्यर्थ बहने के बजाय जमीन के भीतर जाने लगा, जिससे भूजल पुनर्भरण में सहायता मिली। इसके बाद उन्होंने गांव के अन्य किसानों और परिवारों को भी इस तकनीक के लाभ समझाने शुरू किए।

राजेश कुमार ने गांव में बैठकों, चौपालों और व्यक्तिगत संपर्क के माध्यम से लोगों को जल संरक्षण के प्रति जागरूक किया। उन्होंने किसानों को बताया कि यदि प्रत्येक परिवार अपने घर पर वर्षा जल संचयन और रिचार्ज की व्यवस्था करे, तो आने वाले वर्षों में पानी की समस्या को काफी हद तक कम किया जा सकता है। उनकी मेहनत और जागरूकता अभियान का असर धीरे-धीरे दिखाई देने लगा और गांव के कई परिवारों ने भी अपने घरों पर रिचार्ज संरचनाएं बनवानी शुरू कर दीं।

आज उनके गांव में अनेक घरों में रूफ रेन वाटर रिचार्ज स्ट्रक्चर स्थापित हैं। इसके परिणामस्वरूप भूजल स्तर में सुधार देखने को मिला है तथा पानी की गुणवत्ता भी पहले की तुलना में बेहतर हुई है। लोगों को स्वच्छ पानी उपलब्ध होने लगा है और खेती के लिए भी पानी की स्थिति में सकारात्मक बदलाव आया है।

राजेश कुमार का मानना है कि जल संरक्षण केवल सरकार या किसी संस्था की जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। उनकी पहल ने यह साबित कर दिया कि यदि एक व्यक्ति संकल्प ले और स्वयं से शुरुआत करे, तो वह पूरे गांव में सकारात्मक परिवर्तन ला सकता है। आज राजेश कुमार अपने क्षेत्र के किसानों के लिए एक प्रेरणास्रोत बन चुके हैं और उनकी कहानी जल संरक्षण के क्षेत्र में सामुदायिक भागीदारी का एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है।

जो काम लोगों के जीवन को छूता है
वही कहानी बनता है
और जो कहानी दिलों को छू ले
वही समाज बदलती है।

उजाले की शाला

सन् 1992 की बात है। झाबुआ जिला मध्यप्रदेश के छोटे से गांव "काली घाटी" में सूरज ढलते ही सब सन्नाटा हो जाता था। खेतों में दिनभर काम करने वाले बच्चों की आंखों में पढ़ने का सपना था, पर उनके हाथों में कलम की जगह हल था। स्कूल की घंटी उनके लिए पराई थी, क्योंकि सुबह होते ही उन्हें पशुओं को चराने जाना पड़ता था।

तनिष्क पंवार
संपर्क संस्था
पेटलावद, झाबुआ (म.प्र.)

तभी गांव में "सम्पर्क संस्था" के कुछ लोग आए। उन्होंने देखा कि अंधेरे में बैठे बच्चे आसमान के तारों को घूरते हैं, मानो उनसे पूछ रहे हों — "क्या हम भी पढ़ पाएंगे?" उन्हीं बच्चों में बंटी भी था। दिनभर वह अपने पिता के साथ खेतों में काम करता, पशुओं को चराता और शाम को थका-हारा घर लौटता। जब कभी गांव के स्कूल की घंटी सुनाई देती, तो उसका मन भी पढ़ने को मचल उठता, लेकिन जिम्मेदारियों ने उसके कदम बांध रखे थे। उसी रात एक दीये की लौ जलाई गई। उसे नाम दिया गया "रात की शाला"। खेतों से लौटकर थके-मांदे बच्चे जब अलाव के पास बैठते, तो वहीं उनकी पाठशाला लग जाती। स्लेट पर लिखे अक्षर ही नहीं, खेत की मिट्टी, पशुओं की देखभाल और बांध बनाने का ज्ञान भी उनकी किताब बन गया। फिर 10 गांव में ऐसी शालाएं खुलीं, और धीरे-धीरे अंधेरे गांवों में पढ़ाई की रौशनी फैलने लगी।

फिर एक दिन गांव के ही कुछ नौजवान, जो मुश्किल से दसवीं तक पढ़ पाए थे, आगे आए। उनके हाथों में सोलर लैंप था। वे गली-गली जाते और हर घर का अंधेरा दूर करते। बंटी अब हर शाम सबसे पहले शाला पहुंच जाता। सोलर लैंप की सफेद रौशनी में बैठकर वह देर रात तक पढ़ता और जो कुछ सीखता, उसे अपने छोटे भाई-बहनों को भी सिखाता। बच्चे अब लालटेन की पीली रौशनी में नहीं, सोलर की सफेद रौशनी में पढ़ते। इसी को लोगों ने "सोलर सखी" का नाम दे दिया। बच्चों के लिए लकड़ी के बक्से बनाए गए — "भढवानू कंड़ियों"। उनमें अबेकस की गुरियों की खड़खड़ थी, चित्र कार्डों की रंगीन दुनिया थी। माचिस की तीलियों से गिनती सीखते बच्चे हंसते-हंसते गणित के उस्ताद बन गए।

फिर सन् 2004 आया। रात की शाला अब बड़ी हो गई थी। उसे "सम्पर्क बुनियादी शाला" का नाम मिला। गांधी जी के सपनों वाला स्कूल, जहां पढ़ाई सिर्फ इम्तिहान पास करने के लिए नहीं, जीवन जीने के लिए होती थी। यहां दिव्या नाम की लड़की ने पहली बार कैंची पकड़ी और अपने लिए फ्रॉक सी दी। अजय ने साबुन बनाना सीखकर अपनी माँ का हाथ बंटाया। बंटी, जो कभी स्कूल जाने का सपना देखा करता था, अब छोटे बच्चों की पढ़ाई में मदद करने लगा था। यहां की दीवारों पर विज्ञान

की प्रयोगशाला सजी, पुस्तकालय में किताबों की खुशबू बसी, और स्मार्ट क्लास में दुनिया सिमट आई।

इस शाला की एक और कहानी मेरे दिल में बसती है। एक दिन उद्योग के पीरियड में मैं बच्चों को कागज से चिड़िया, बिल्ली और मेंढक बनाना सिखा रहा था। बनाते-बनाते कक्षा का एक बच्चा टकटकी लगाकर मुझे देख रहा था। जब कागज का मेंढक बनकर फुदकने लगा, तो सारे बच्चे ताली बजाने लगे। तभी वो बच्चा मासूमियत से बोल उठा — "सर आप तो भगवान हो। आपने एक कागज में जान डाल दी, देखो ये कैसे फुदक रहा है।"

उस पल मेरा गला भर आया। पहली बार किसी ने मुझे भगवान कहा था। वो प्रशंसा नहीं थी, वो एक बच्चे के भोले विश्वास की ताकत थी। उसी दिन समझ आया कि सम्पर्क की शाला में हम सिर्फ अक्षर नहीं पढ़ाते, हम बच्चों को सपने दिखाते हैं। और जब बच्चा टीचर को भगवान कह दे, तो समझो दिया जल गया है।

आज उस काली घाटी से निकला बंटी सरकारी शिक्षक है, दिव्या अपने गांव में ही ब्यूटी पार्लर चलाकर लड़कियों को सिखा रही है। चालीस साल में नब्बे हजार से ज्यादा बच्चों ने इस शाला की देहरी लांघी है।

सम्पर्क ने बस स्कूल नहीं खोला, उसने हर उस बच्चे के सपने को रोशन कर दिया जो कभी अंधेरे में खो जाने वाला था और शायद यही शिक्षा है - अंधेरे से उजाले तक का सफर, एक बच्चे के हाथ से दूसरे बच्चे के हाथ तक।

ऐसे रुकने लगा पलायन

मिट्टी में पसीना मिलाकर, जो सोना उगाता है,
खुद भूखा रहकर भी, दुनिया का पेट भरता है।
संघर्ष उसकी पहचान है, मेहनत उसका मान है,
किसान नहीं तो समझो, सूना हर खेत खलियान है॥

यह कहानी है मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले की जो एक प्रमुख आदिवासी बहुल जिला है जो लोक संस्कृति, मेहनतकश समुदाय और प्राकृतिक संसाधनों के लिए जाना जाता है। यहां 90% आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। लोगों की आजीविका का प्रमुख साधन खेती, पशुपालन और मजदूरी है। यहां पर 80% से ज्यादा छोटे और सीमांत किसान हैं और 70% से अधिक खेत लहरदार, ढालू और पथरीली भूमि वाले हैं। यहां 40-60 % किसान वर्षा आधारित खेती करते है और खेती का आकार कम होंने के कारण किसानों के सामने हमेशा चुनौतियां बनी रहती हैं जिससे कई परिवारों को मजबूरी में रोज़गार के लिए पलायन करना पड़ता है।

कमलेश
संपर्क संस्था
पेटलावद, झाबुआ (म.प्र.)

संपर्क संस्था इस क्षेत्र में जनजातीय समुदाय में समानता, न्यायसंगत और पर्यावरण के अनुकूल वातावरण स्थापित करने के दृष्टिकोण से कार्य कर रही है, ताकि सबसे कमजोर और वंचित समुदाय को उनका उचित सम्मान और गरिमापूर्ण जीवन प्राप्त हो सके। संस्था का मानना है की स्थायी विकास बाहर से नहीं बल्कि समुदाय के अंदरूनी ज्ञान, संसाधनों और नेतृत्व को मजबूत करने से आता है, ताकि लोग स्वयं परिवर्तन के वाहक बन सकें।

इसी उद्देश्य के साथ संपर्क संस्था द्वारा गांव में स्थानीय नेतृत्व विकसित करने का कार्य किया जा रहा है जो समुदाय और विकास के बीच सेतु का कार्य करेगा। यहां गांव स्तर पर कृषि मित्र, पशु सखी-मित्र और बीज मित्र के रूप में वालंटियर तैयार किए गए हैं जो पारंपरिक खेती के तरीको को पुर्नजीवित करने, जैविक खेती को बढावा देने, छोटे पशु जैसे मुर्गी और बकरी के लिए स्वास्थ्य सेवाएं और देशी बीजो को बढाने के साथ उनके संरक्षण का कार्य कर रहे हैं।

ऐसे ही झाबुआ जिले के पेटलावद ब्लॉक के ग्राम कचरा खदान का कृषि मित्र मांगू सरवनिया गुन्डिया है जो इस उद्देश्य पर कार्यरत हैं। मांगू भाई अपनी पत्नी और 2 बच्चों के साथ खेती के काम से जुड़े हैं। इनके पास 4 बीघा पथरीली और ढालू जमीन थी जिसमें सोयाबीन, कपास, मक्का जैसी ही फसलें ले पाते थे। सीमित सिंचाई के साधन और मिटटी की उर्वरकता कम होने से उत्पादन तो कम हो रहा था साथ ही रासायनिक खाद और कीटनाशक का उपयोग जरुरत से ज्यादा बढता जा रहा था जिससे खेती की लागत बढती जा रही थी, इस स्थिति को देखते हुए मांगू भाई ने सोचा कि इस तरीके की अधिक समय तक गुजारा नही हो सकता इसलिए उन्होंने भी पलायन पर जाकर मजदूरी करने का फैसला लिया।

इन्हीं परिस्थिति में वर्ष 2022 में संपर्क संस्था ने गांव कचरा खदान का चयन किया और आजीविका परियोजना के अंतर्गत विकासात्मक कार्य करना प्रारंभ किया गया। गांव स्तर की बैठक में मांगू ने संस्था की योजनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त की और भूमि सुधार कार्य के लिए अपना नाम दिया। समुदाय की सहभागिता और सामूहिक निर्णय से मांगू के यहां भूमि सुधार कार्य किया गया। इस कार्य के बाद खेती में आए बदलाव को देखकर उन्होंने पलायन पर जाने की बात छोड़ दी और अपने पूर्वजों की खेती को ही आगे बढ़ाने में जुट पड़े। उन्होंने संस्था के नियमित बैठकों, प्रशिक्षण और एक्सपोजर से जुड़कर जैविक खेती, देशी बीज के महत्त्व के बारे में जानकारी प्राप्त की और 1 बीघा में जैविक खेती एवं देशी बीजो का उपयोग करना प्रारंभ किया। इस कार्य से उन्हें न सिर्फ अच्छी फसल हुई बल्कि उनकी आय भी बढ़ी। इस परिवर्तन ने उन्हें और आगे बढने के लिए प्रेरित किया। मांगू की लगन,

परिश्रम और सिखने की इच्छा को देखते हुए उन्हें "कृषि मित्र" के रूप में तैयार किया गया।

मांगू द्वारा पिछले 3 सालो से अपनी 3 बीघा जमीन में पूरी तरह से जैविक खेती कर रहे हैं, और दूसरे किसानों को अपने खेत पर एक्सपोजर कर उन्हें प्रेरित करने का कार्य किया जा रहा है, इनके द्वारा खेत पाठशाला के साथ बायो इनपुट रेसोर्स सेंटर (बीआरसी) का संचालन किया जा रहा है, जिसमें गांव के किसानों को जैविक खेती के लिए प्रशिक्षित एवं समुदाय की भागीदारी के साथ जैविक उत्पादों का निर्माण कर उपयोग करवाया जा रहा है। आज इनके द्वारा जैविक खाद के लिए वर्मी पिट, फ्लेक्सी बायोगैस की स्थापना कर जैविक खाद बनाकर उपयोग किया जा रहा है और उद्यानिकी विभाग से बागवानी और ड्रिप योजना का लाभ लेकर टमाटर, मिर्ची, सब्जियों का उत्पादन लिया जा रहा, साथ ही 8-9 प्रकार के देशी बीजो का भी संरक्षण किया जा रहा है, बीज, खाद और कीटनाशक के लिए बाजार पर निर्भरता कम होने से उनकी आमदनी जो सालाना 30000/- रूपये थी आज उससे बढकर 70-80 हजार रूपये की वृद्धि हो गयी है।

मांगू द्वारा अब कृषि मित्र के रूप नियमित किसानो से संपर्क कर जैविक खेती और पारम्परिक देशी बीजों को बचाने और किसानों को प्रशिक्षित करने का कार्य किया जा रहा है इनके द्वारा अभी तक 50

से अधिक किसानों को जैविक खेती की मुहीम में जोड़ा गया साथ ही 200 से अधिक किसानों को अपने खेत पर एक्सपोजर करवाया गया और निरंतर कार्यरत है। मांगू भाई की यह यात्रा केवल एक किसान की सफलता की कहानी नहीं है, बल्कि यह दिखाती है कि जब समुदाय को सही दिशा, स्थानीय नेतृत्व और तकनीकी सहयोग मिलता है तो बदलाव गांव के भीतर से ही जन्म लेता है। कभी सीमित संसाधनों और पलायन की मजबूरी से जूझने वाला एक किसान आज अपने खेत को सीखने और प्रेरणा का केंद्र बना चुका है।

सुरक्षित स्कूल-सुरक्षित जीवन का संकल्प

आज के दौर में जलवायु परिवर्तन, बढ़ता औद्योगीकरण और लगातार बढ़ती जनसंख्या मानव जीवन के सामने अनेक चुनौतियां खड़ी कर रहे हैं। प्राकृतिक और मानवजनित आपदाएं आए दिन जन-धन की हानि का कारण बन रही हैं। यह कहानी राजस्थान के कोटा जिले के सुल्तानपुर विकासखंड स्थित ग्राम बमोरी के एक समर्पित शिक्षक, श्री रामचंद्र गोचर की है, जिन्होंने विद्यालय और विद्यार्थियों को सुरक्षित बनाने का संकल्प लिया और उसे अपने अथक प्रयासों से साकार कर दिखाया।

मनोज चौरसिया
आरएडबल्यूएस
कोटा, राजस्थान

वर्ष 2024 में उनके जीवन में एक ऐसी घटना घटी, जिसने उनके सोचने का नजरिया पूरी तरह बदल दिया। ग्राम बमोरी के निकट एक विद्यालय में शौचालय की दीवार गिरने से एक मासूम छात्रा की मृत्यु हो गई। यह घटना अभी लोगों के मन से निकली भी नहीं थी कि कुछ ही दिनों बाद पड़ोसी जिले झालावाड़ के एक प्राथमिक विद्यालय की छत गिरने से कई बच्चों की दर्दनाक मौत हो गई।

इस हृदयविदारक घटना ने पूरे समाज को झकझोर कर रख दिया। शासन और प्रशासन ने समाधान खोजने के प्रयास तो किए, लेकिन स्थायी और प्रभावी व्यवस्था विकसित नहीं हो सकी। इसका रामचंद्र गोचर जी के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने महसूस किया कि यदि समय रहते सुरक्षा के प्रति जागरूकता और तैयारी हो, तो ऐसी अनेक घटनाओं को रोका जा सकता है। उसी क्षण उनके मन में एक संकल्प ने जन्म लिया-अपने विद्यालय को हर प्रकार के खतरे से सुरक्षित बनाना। लेकिन यह कार्य आसान नहीं था। वे लगातार सोचते रहे कि इस लक्ष्य को कैसे प्राप्त किया जाए।

इसी दौरान उनके क्षेत्र में स्कूल शिक्षा विभाग, के.के. बिरला मेमोरियल सोसायटी तथा रॉस इंडिया के सहयोग से "प्रोजेक्ट सेफ (SAFE – Safety Awareness for Everyone)" प्रारंभ हुआ। इस परियोजना के माध्यम से विद्यालयों और ग्रामीण समुदायों को सुरक्षा एवं आपदा प्रबंधन का प्रशिक्षण दिया जा रहा था। गोचर जी ने इस अवसर का पूरा लाभ उठाया। उन्होंने प्राकृतिक एवं मानवजनित खतरों की पहचान, जोखिम आकलन, सुरक्षा उपकरणों के उपयोग, आपदा के समय बचाव एवं राहत कार्यों तथा स्थानीय संसाधनों के प्रभावी उपयोग से संबंधित विस्तृत प्रशिक्षण प्राप्त किया।

प्रशिक्षण के बाद उन्होंने अपने विद्यालय में सीखी गई तकनीकों को लागू करना शुरू किया। विद्यार्थियों और स्टाफ को नियमित रूप से सुरक्षा संबंधी जानकारी देने लगे। प्रारंभ में उन्होंने प्रार्थना सभा के दौरान सुरक्षा विषयों पर चर्चा शुरू की, लेकिन उन्हें लगा कि इसका प्रभाव अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुंच रहा है।

तब उन्होंने एक अभिनव पहल की शुरुआत की। प्रत्येक शनिवार को किसी संभावित खतरे या आपदा की काल्पनिक स्थिति का नाट्य रूपांतरण कर विद्यार्थियों और शिक्षकों को उससे बचाव के तरीके सिखाने लगे। इस अनूठी पहल का नाम उन्होंने रखा- "सुरक्षित शनिवार (Safe Saturday)"। यह गतिविधि विद्यार्थियों में अत्यंत लोकप्रिय हुई जिसने सुरक्षित स्कूल के साथ ही सुरक्षित जीवन का संदेश फैलाने में अहम भूमिका निभायी है।

संवाद केवल सूचना देना नहीं,
बल्कि विश्वास का पुल बनाना है।
कहानीकारी उसी पुल पर लोगों को
एक-दूसरे से जोड़ती है।

Bijamrut

प्राकृतिक खेती की राह पर 'हंसराज'

राजस्थान के सीकर जिला के खंडेला ब्लॉक के युवा किसान श्री हंसराज सैनी आज अपने क्षेत्र में प्रकृति खेती को बढ़ावा देने वाले प्रगतिशील किसानों में गिने जाते हैं। उनकी कहानी उन युवाओं के लिए प्रेरणा है जो खेती को केवल पारंपरिक पेशा नहीं, बल्कि एक सम्मानजनक और टिकाऊ आजीविका के रूप में अपनाना चाहते हैं।

दीपक जांगिड
बजाज फाउंडेशन,
सीकर(राजस्थान)

हंसराज सैनी ने अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद खेती को अपना मुख्य व्यवसाय बनाने का निर्णय लिया। शुरुआत में वे अपने परिवार के साथ पारंपरिक खेती करते थे, लेकिन खेती में बढ़ती लागत और मिट्टी की घटती उर्वरता को देखकर वे खेती के नए और टिकाऊ विकल्पों की तलाश में थे।

इसी दौरान उनका जुड़ाव बजाज फाउंडेशन से हुआ। संस्था द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों और किसान बैठकों के माध्यम से उन्हें प्रकृति खेती के सिद्धांतों और लाभों के बारे में जानकारी मिली। इससे प्रेरित होकर उन्होंने अपने खेत में जीवामृत, बीजामृत और अन्य प्राकृतिक कृषि पद्धतियों का प्रयोग शुरू किया।

प्रकृति खेती अपनाने के साथ-साथ हंसराज जी ने खेती में विविधता लाने पर भी ध्यान दिया। उन्होंने पारंपरिक फसलों के साथ बागवानी एवं फूलों की खेती शुरू की, जिससे उनकी आय के नए स्रोत विकसित हुए। प्राकृतिक तरीकों से की गई खेती ने उनकी उत्पादन लागत को कम किया और मिट्टी के स्वास्थ्य में भी सुधार किया। आज हंसराज सैनी न केवल सफलतापूर्वक खेती कर रहे हैं, बल्कि अपने आसपास के किसानों को भी प्रकृति खेती अपनाने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। वे नियमित रूप से किसानों के साथ अपने अनुभव साझा करते हैं और उन्हें रासायनिक खेती पर निर्भरता कम कर प्राकृतिक कृषि की ओर बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

हंसराज जी का मानना है कि प्रकृति खेती केवल खेती की एक पद्धति नहीं, बल्कि प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने का माध्यम है। उनकी मेहनत, नवाचार और सीखने की लगन ने उन्हें क्षेत्र के अन्य किसानों के लिए एक प्रेरणास्रोत बना दिया है। हंसराज सैनी की यह यात्रा दर्शाती है कि यदि युवा किसान नई सोच और सही मार्गदर्शन के साथ आगे बढ़ें, तो खेती को लाभकारी, टिकाऊ और पर्यावरण-अनुकूल बनाया जा सकता है।

अच्छा काम तभी दूर तक जाता है,
जब उसे संवाद का साथ मिलता है।
कहानीकारी बदलाव को दिखाती भी है
और और महसूस भी कराती है।

वर्कशॉप की झलकियां

वर्कशॉप की झलकियां

सुजागृति समाज सेवी संस्था | आसरा फाउंडेशन | स्पंदन | उदय | गांधी न्यास | आरएडब्ल्यूएस

सिनर्जी संस्थान | आस्था समिति | पृथ्वी ट्रस्ट | तिनका | कबीर जन विकास समूह | संकल्प | शेडो

नींव | प्रगति ग्रामीण विकास संस्था | मुश्त समाज सेवा समिति | ग्रामोदय ग्राम विकास समिति वाग्धारा

ग्रामोदय ग्राम विकास समिति | वर्क फॉर इक्वालिटी | दोआबा विकास एवं उत्थान समिति | जन जागृति केंद्र

पहल जन सहयोग विकास संस्थान | ग्रामीण समस्या मुक्ति ट्रस्ट | फाउंडेशन फॉर एजुकेशन एंड डेवलपमेंट

उन्नयन जन विकास समिति | जतन संस्थान | श्री जन कल्याण समाजसेवी संस्थान | आशा किरण सेवा संस्थान

ग्राम विकास नवयुवक मंडल | नई दिशा | अलखा फाउंडेशन | समाधान फाउंडेशन | बजाज फाउंडेशन

विकासोन्मुख संस्थान | प्रभात विकास मंच | फाउंडेशन टू एजुकेट गर्ल्स ग्लोबली | इब्तिदा

सामाजिक प्रेरणा एवं ग्रामीण विकास संस्थान | सेंटर फॉर बी डेवलपमेंट | एकल नारी शक्ति संगठन

फीड | ड्रीम्स | मितवा | जीवीएसटीके | मंजरी फाउंडेशन | आरआरए नेटवर्क | चौपाल

एनसीएनएफ नेटवर्क | इंडियन ग्रामीण सर्विसेस | सेंटर फॉर माइक्रो फाइनेंस

संपर्क | ग्रामोदय प्रकृति फांउडेशन | सवेरा फाउंडेशन | विकास संवाद

9 788199 732650

विकास संवाद समिति
ए-5, आयकर कॉलोनी, जी-3, गुलमोहर,
बावड़िया कलां, भोपाल. फोन : 0755-4252789
ई-मेल: office@vssmp.org | वेबसाइट : www.vssmp.org